विज्ञानं ब्रह्म

हिंदी प्रकोष्ठ की अर्द्धवार्षिक पत्रिका

ज्ञानधारा

शरद अंक | 2023

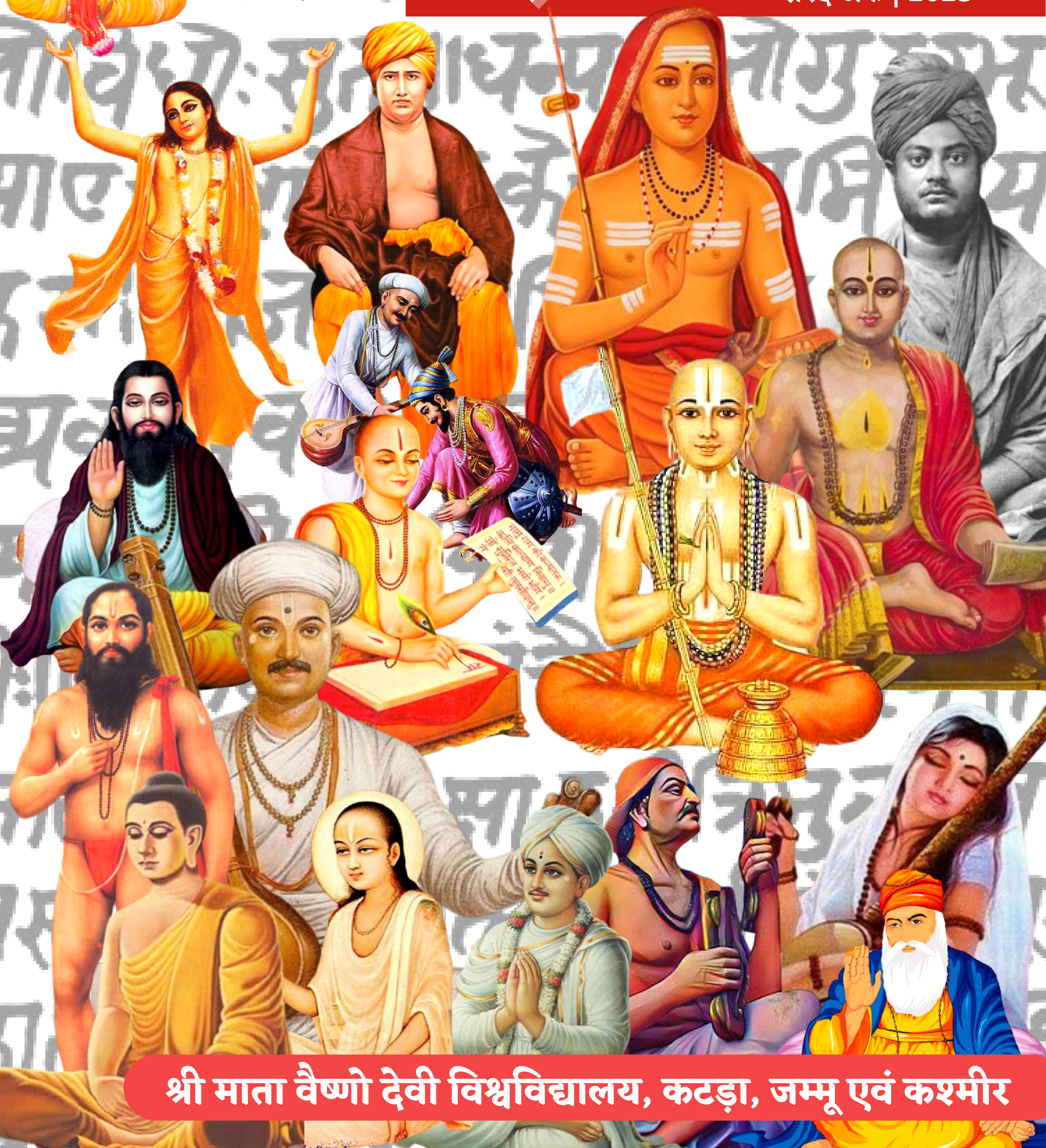

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय, कटड़ा, जम्मू एवं कश्मीर

क्रम

शीर्षक	पृष्ठ सं.
• चार साहिबज़ादों का पराक्रम	5
• त्याग व राष्ट्रप्रेम के साकार स्वरूप: खुदीराम बोस	11
• नमामि अम्ब भारती !	15
• कलम आज उनकी जय बोल	16
• हे....सागर!!!	18
• गुरुभक्ति	20
• विवेकानंद-रामकृष्ण संवाद	23
• कला कुंज	27
• हनुमान प्रसाद पोद्दार (भाई जी) का योगदान	30
• महाराज सूरजमल की चिट्ठी	33
• सच्ची सेवा	34
• जागो प्यारे	35
• प्रयाण गीत	36
• आचार्य अभिनव गुप्त	37
• अच्छे व्यवहार का रहस्य	42
• सिंगोली का युद्ध	44
• स्वामी रामतीर्थ अमेरिका में	47
• शोर ही शोर है	49
• कैशलेस मैरेज	51
• विश्व के ज्ञान मंदिर भारत के प्राचीन विश्वविद्यालय	54
• स्वतंत्रता यज्ञ के नायक महर्षि दयानंद	60
• हृदय	63

।। माँ सरस्वती मंत्र ।।

नमस्ते शारदे देवी काश्मीरपुरवासिनि,
त्वामहं प्रार्थये नित्यं विद्यादानं च देहि मे।।

---संरक्षक---

प्रो. रवींद्र कुमार सिन्हा
(माननीय कुलपति)

---संपादक---

डॉ. अनिल कुमार तिवारी
(नोडल अधिकारी, हिंदी प्रकोष्ठ)

---सह-संपादक---

मिलिन्द शुक्ल
(छात्र सचिव)

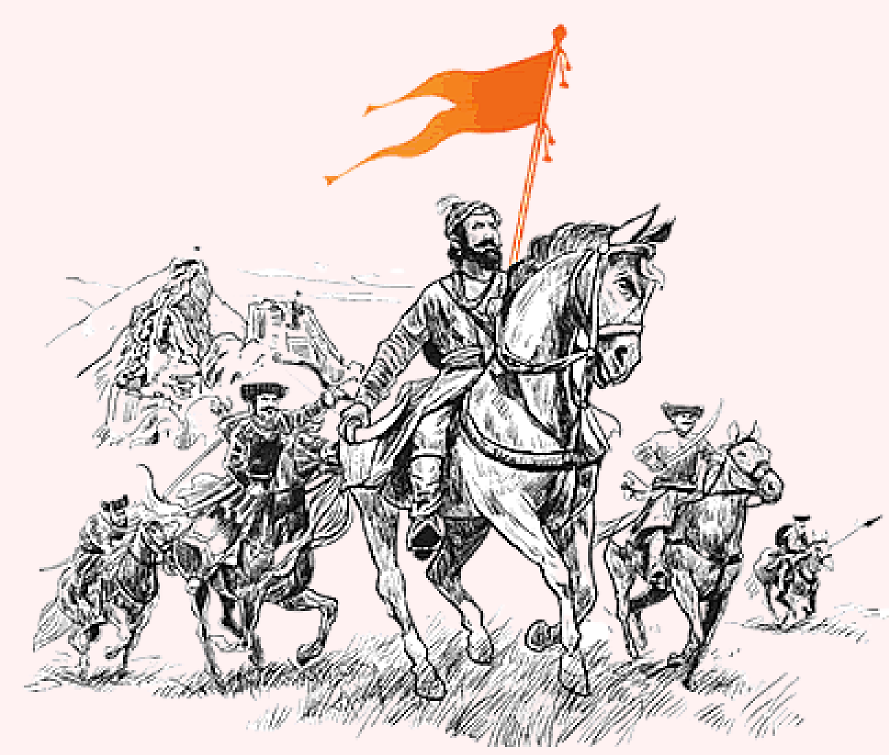

हिंदी प्रकोष्ठ कार्यालय

एसएमवीडीयू परिसर,कटड़ा-182320 (जम्मू-कश्मीर)

पत्रिका में लेख भेजने हेतु ईमेल का प्रयोग करें, साथ मे अपना नाम,पूरा पता,संपर्क सूत्र अवश्य अंकित करें।

अपने लेख/कविताएं ईमेल करें:
hindi.cell@smvdu.ac.in

।।श्री गणेश स्तुति।।

गजवदन शोभितं मोदकं सदा प्रियम्
वक्रतुण्ड धारकं कृष्णपिच्छ मोहनम्
विकटरूप धारिणं देववृन्द वन्दितम्
स्मरामि विघ्नहारकं मम बन्ध मोचकम्॥

सुराणां प्रधानं मूषक वाहनम्
रिद्धि सिद्धि संयुतं भालचन्द्र शोभनम्
ज्ञानिनां वरिष्ठं इष्ट फल प्रदायकम्
सदा भावयामि त्वां सगुण रूप धारिणम्।।

Prof. (Dr.) Ravindra Kumar Sinha
FLS (London), FAZ, FZSI, FNEE, FIFSI, FAEB, MNASc.
Vice Chancellor
Padma Shri Awardee
The Order of the Golden Ark Awardee (The Netherlands)
Recipient of the Swarna Jayanti Pururskar (NASI)
Member, Cetacean Specialist Group (IUCN)

कुलपति संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता है कि विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकोष्ठ की पत्रिका 'ज्ञानधारा' का शरद अंक 2023 प्रकाशित हो रहा है। यह भारत की महान ऋषि व सन्यास परंपरा को समर्पित है,उन महान तपस्वियों ने धर्म, ज्ञान व विज्ञान को प्रबलता प्रदान की व अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र व धर्म कल्याण के लिए समर्पित किया। इस वर्ष भारत को G-20 की अध्यक्षता भी प्राप्त हुई है,जो प्रत्येक भारतवासी के लिए गर्व का अवसर है।जब भारत अपनी आज़ादी का अमृत महोत्सव मना रहा है और साथ G-20 की अध्यक्षता कर रहा है इस कालखंड में 'ज्ञानधारा' का यह अंक विशिष्ट है।इसमें आज़ादी के अमृत महोत्सव की छाप स्पष्ट है। मुझे खुशी है कि विश्वविद्यालय परिवार के अनेक सदस्यों ने इस पत्रिका में अपनी रचनात्मक कृतियों के माध्यम से योगदान किया है। मैं उन्हें साधुवाद देता हूँ।

इस पत्रिका की संपादकीय मंडली को विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहूँगा जिनके अथक प्रयास से इस अंक का संकलन और प्रकाशन किया जा रहा है। विश्वविद्यालय का हिन्दी प्रकोष्ठ हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में इसी तरह योगदान करता रहे ऐसी मेरी सदिच्छा है।

धन्यवाद!

(रवींद्र कुमार सिन्हा)
कुलपति

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय

ककरियाल, कटड़ा, संघशासित जम्मू-कश्मीर (भारत) -182320

डॉ० अनिल कुमार तिवारी

नोडल अधिकारी, हिन्दी प्रकोष्ठ

हिन्दी प्रकोष्ठ की पत्रिका "ज्ञानधारा" का शरद अंक २०२३ आपको प्रस्तुत करते हुये हर्ष की अनुभूति स्वाभाविक है। इस अंक का संकल्पन और अभिकल्पन मिलिन्द शुक्ल (२०बीएमई०२२) ने किया है इसके लिए मैं इन्हें साधुवाद देता हूँ और इनके उज्ज्वल भविष्य की शुभकामना करता हूँ। इस अंक में प्रमुख रूप से भारत की आध्यात्मिक विरासत और ऋषि परंपरा की एक झलक दिखाने का प्रयास स्तुत्य है। आजादी के ७५वें वर्ष में भारतीय संस्कृति में अनुस्यूत मानवता के कल्याण की भावना का अंकन प्रेरणादायी है।

आज़ादी के अमृतकाल में भारत द्वारा विश्व के १९ प्रमुख देशों और यूरोपीय संघ (जी-२०) की अध्यक्षता करना अपनी आर्थिक क्षमता और आध्यात्मिक विरासत को विश्व के समक्ष रखने का एक महत्त्वपूर्ण अवसर है। इस अंक में इसको भी रेखांकित किया गया है। इसमें भारत की ज्ञान परंपरा के प्राचीन केन्द्रों की सूचना भी रोचक है। अपनी रचनाधर्मिता को लोगों तक पहुंचाने के लिए जिन्होंने इस अंक में योगदान किया है, मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। मुझे विश्वास है कि ऐसे रचनाकारों का हमें सदैव सहयोग मिलता रहेगा। इनसे प्रेरणा लेकर और भी रचनाकार सामने आएंगे।

सहयोग और प्रोत्साहन के लिए आप सभी को बहुत-बहुत धन्यवाद।

अनिल कुमार तिवारी
नोडल अधिकारी
हिन्दी प्रकोष्ठ
श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय
कटड़ा, जम्मू एवं कश्मीर–182320 (भारत)

चार साहिबजादों का पराक्रम

वीर बाल दिवस यह उन चार वीर साहिबजादों की याद में समर्पित है, जिन्होंने सनातन हिंदू धर्म की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया। लेकिन बर्बर मुगलों के सामने नहीं झुके और न ही धर्म परिवर्तन किया। ये सप्ताह सिखों के दसवें गुरू गोबिंद सिंह के पुत्रों साहिबज़ादा अजीत सिंह, जुझार सिंह, ज़ोरावर सिंह, व फतेह सिंह को समर्पित है, जिनके लिए चार साहिबज़ादे शब्द का प्रयोग सामूहिक रूप से संबोधित करने हेतु किया जाता है।

श्री गुरु गोबिन्द सिंह की तीन पत्नियाँ थीं। 21 जून, 1677 को दस साल की उम्र में उनका विवाह माता जीतो के साथ आनंदपुर से दस किलोमीटर दूर बसंतगढ़ में किया गया। उन दोनों के तीन पुत्र हुए जिनके नाम थे – जुझार सिंह, जोरावर सिंह, फ़तेह सिंह। 4 अप्रैल, 1684 को 17 वर्ष की आयु में उनका दूसरा विवाह माता सुंदरी के साथ आनंदपुर में हुआ। उनका एक बेटा हुआ जिसका नाम था अजित सिंह।

खालसा पंथ की स्थापना के बाद मुगल शासकों, सरहिंद के सूबेदार वजीर खां द्वारा आक्रमण के बाद 20-21 दिसंबर 1704 को मुगल सेना से युद्ध करने के लिए गुरु गोबिंद सिंह जी ने परिवार सहित श्री आनंद पुर साहिब का किला छोड़ा। सरसा नदी पर जब गुरु गोबिंद सिंह जी परिवार अलग हो रहा था, तो एक ओर जहां बड़े साहिबजादे गुरु जी के साथ चले गए, वहीं दूसरी ओर छोटे साहिबजादे जोरावर सिंह और फतेह सिंह, माता गुजरी जी के साथ रह गए थे। उनके साथ ना कोई सैनिक था और ना ही कोई उम्मीद थी जिसके सहारे वे परिवार से वापस मिल सकते थे।

अचानक रास्ते में उन्हें गंगू मिल गया, जो किसी समय पर गुरु महल की सेवा करता था। गंगू ने उन्हें यह आश्वासन दिलाया कि वह उन्हें उनके परिवार से मिलाएगा और तब तक के लिए वे लोग उसके घर में रुक जाएं।

माता गुजरी जी और साहिबजादे गंगू के घर चले तो गए लेकिन वे गंगू की असलियत से परिचित नहीं थे। गंगू ने लालच में आकर तुरंत वजीर खां को गोबिंद सिंह की माता और छोटे साहिबजादों के उसके यहां होने की खबर दे दी जिसके बदले में वजीर खां ने उसे सोने की मोहरें भेंट की।

खबर मिलते ही वजीर खां के सैनिक माता गुजरी और 7 वर्ष की आयु के साहिबजादा जोरावर सिंह और 5 वर्ष की आयु के साहिबजादा फतेह सिंह को गिरफ्तार करने गंगू के घर पहुंच गए। उन्हें लाकर ठंडे बुर्ज में रखा गया और उस ठिठुरती ठंड से बचने के लिए कपड़े का एक टुकड़ा तक ना दिया।

रात भर ठंड में ठिठुरने के बाद सुबह होते ही दोनों साहिबजादों को वजीर खां के सामने पेश किया गया, जहां भरी सभा में उन्हें इस्लाम कबूल करने को कहा गया। कहते हैं सभा में पहुंचते ही बिना किसी हिचकिचाहट के दोनों साहिबजादों ने ज़ोर से जयकारा लगाया "जो बोले सो निहाल, सत श्री अकाल", यह देख सब दंग रह गए, वजीर खां की मौजूदगी में कोई ऐसा करने की हिम्मत भी नहीं कर सकता लेकिन गुरु जी के वीर सपूत ऐसा करते समय एक पल के लिए भी नही डरे। सभा में मौजूद मुलाजिम ने साहिबजादों को वजीर खां के सामने सिर झुकाकर सलामी देने को कहा, लेकिन इस पर उन्होंने जो जवाब दिया वह सुनकर सबने चुप्पी साध ली।

दोनों ने सिर ऊंचा करके जवाब दिया कि 'हम अकाल पुरख और अपने गुरु पिता के अलावा किसी के भी सामने सिर नहीं झुकाते। ऐसा करके हम अपने दादा की कुर्बानी को बर्बाद नहीं होने देंगे, यदि हमने किसी के सामने सिर झुकाया तो हम अपने दादा को क्या जवाब देंगे जिन्होंने धर्म के नाम पर सिर कलम करवाना सही समझा, लेकिन झुकना नहीं'।

वजीर खां ने दोनों साहिबजादों को काफी डराया, धमकाया और प्यार से भी इस्लाम स्वीकार करने के लिए राज़ी करना चाहा, लेकिन दोनों अपने निर्णय पर अटल थे।

आखिर में दोनों साहिबजादों को जिंदा दीवारों में चुनवाने का ऐलान किया गया। कहते हैं दोनों साहिबजादों को जब दीवार में चुनना आरंभ किया गया तब उन्होंने 'जपुजी साहिब' का पाठ करना शुरू कर दिया और दीवार पूरी होने के बाद अंदर से जयकारा लगाने की आवाज़ भी आई। ऐसा कहा जाता है कि वजीर खां के कहने पर दीवार को कुछ समय के बाद तोड़ा गया, यह देखने के लिए कि साहिबजादे अभी जिंदा हैं या नहीं। तब दोनों साहिबजादों के कुछ श्वास अभी बाकी थे, लेकिन मुगल मुलाजिमों का कहर अभी भी जिंदा था। उन्होंने दोनों साहिबजादों को जबर्दस्ती मौत के गले लगा दिया।

उधर दूसरी ओर साहिबजादों के बलिदान की खबर सुनकर माता गुजरी जी ने अकाल पुरख को इस गर्वमयी बलिदान के लिए धन्यवाद किया और अपने प्राण त्याग दिए। 27 दिसम्बर सन् 1704 को दोनों छोटे साहिबजादे जोरावर सिंह व फतेह सिंहजी को दीवारों में चुनवा दिया गया। जब यह हाल गुरुजी को पता चला तो उन्होंने औरंगजेब को एक जफरनामा (विजय की चिट्ठी) लिखा, जिसमें उन्होंने औरगंजेब को चेतावनी दी कि तेरा साम्राज्य नष्ट करने के लिए खालसा पंथ तैयार हो गया है।

अजीत सिंह श्री गुरु गोबिन्द सिंह के सबसे बड़े पुत्र थे। चमकौर के युद्ध में अजीत सिंह अतुलनीय वीरता का प्रदर्शन करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। गुरु जी द्वारा नियुक्त किए गए पांच प्यारों ने अजीत सिंह को समझाने की कोशिश की कि वे ना जाएं, क्योंकि वे ही सिख धर्म को आगे बढ़ाने वाली अगली शख्सियत हो सकते हैं लेकिन पुत्र की वीरता को देखते हुए गुरु जी ने अजीत सिंह को निराश ना किया। रणभूमि में गए उन्होंने स्वयं अपने हाथों से अजीत सिंह को युद्ध लड़ने के लिए तैयार किया, अपने हाथों से उन्हें शस्त्र दिए थमाए और पांच सिखों के साथ उन्हें किले से बाहर रवाना किया। कहते हैं रणभूमि में जाते ही अजीत सिंह ने मुगल फौज को थर-थर कांपने पर मजबूर कर दिया। अजीत सिंह कुछ यूं युद्ध कर रहे थे मानो कोई बुराई पर कहर बरसा रहा हो।

अजीत सिंह एक के बाद एक वार कर रहे थे, उनकी वीरता और साहस को देखते हुए मुगल फौज पीछे भाग रही थी लेकिन वह समय आ गया था जब अजीत सिंह के तीर खत्म हो रहे थे। जैसे ही दुश्मनों को यह अंदाज़ा हुआ कि अजीत सिंह के तीर खत्म हो रहे हैं, उन्होंने साहिबजादे को घेरना आरंभ कर दिया।लेकिन तभी अजीत सिंह ने म्यान से तलवार निकाली और बहादुरी से मुगल फौज का सामना करना आरंभ कर दिया। कहते हैं तलवार बाजी में पूरी सिख फौज में भी अजीत सिंह को कोई चुनौती नहीं दे सकता था तो फिर ये मुगल फौज उन्हें कैसे रोक सकती थी। अजीत सिंह ने एक-एक करके मुगल सैनिकों का संहार किया, लेकिन तभी लड़ते-लड़ते उनकी तलवार भी टूट गई, फिर उन्होंने अपनी म्यान से ही लड़ना शुरू कर दिया, वे आखिरी सांस तक लड़ते रहे और फिर आखिरकार वह समय आया जब उन्होंने वीरगति को अपनाया और महज़ 17 वर्ष की उम्र में बलिदान हो गए।

अजीत सिंह से छोटे जुझार सिंह अपने बड़े भाई के बलिदान के पश्चात् नेतृत्व संभाला तथा पदचिन्हों पर चलते हुए अतुलनीय वीरता का प्रदर्शन करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।

।। सुभाषितानि ।।

पुण्यं प्रज्ञा वर्धयति क्रियमाणं पुनः पुनः ।
वृद्ध प्रज्ञः पुण्यमेव नित्यम् आरभते नरः ।।

भावार्थ :
बार-बार पुण्य करने से मनुष्य की विवेक बुद्धि बढ़ती है और जिसकी विवेक- बुद्धि बढ़ती रहती हो ऐसा व्यक्ति हमेशा पुण्य ही करता है

“

बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहनी मूरत, साँवरी सूरत,
नैना बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजत,
उर बैजंती माल॥
छुद्रघंटिका कटितट सोभित,
नूपुर सबद रसाल।
मीरां प्रभु संतन सुखदाई
भगत बछल गोपाल॥

- मीराबाई

”

त्याग व राष्ट्र प्रेम के साकार स्वरूप: खुदीराम बोस

• मिलिन्द कुमार शुक्ल

भारत ज्ञान, विज्ञान व महापुरुषों की जन्मस्थली के रूप में विश्वभर मे ख्याति प्राप्त है। इस महान धरा पर अनेक युगपुरुषों, वीरांगनाओं ने जन्म लेकर भारत के यश को और उज्ज्वल किया है। स्वतंत्रता संग्राम के यज्ञ में लाखों क्रान्तिकारियों ने अपना सम्पूर्ण जीवन आहूत कर दिया, इनमें से अनेक ऐसे वीर, वीरांगनाएँ थे जो गुमनामी के अंधेरे में कहीं खो से गये इन्हीं में से एक ऐसे सूर्य का नाम है जो कभी न कभी अपनी किरणों से भारत के मन में अपनी मौजूदगी के प्रमाण देता रहता है। बात है खुदीराम बोस की ;वीरता और समर्पण की इस महान मूर्ति ने बेहद छोटी आयु मात्र 19 वर्ष में भारत की स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन राष्ट्र की बलिवेदी पर अर्पण कर दिया। यह वह उम्र है जिसमे युवा वर्ग अपने कैरियर या स्वयं पर बहुत ध्यान देते हैं।

इस सूर्य का उदय भारत में 3 दिसम्बर सन् 1889 को पश्चिम बंगाल के मेदिनीपुर के हबीबगंज में हुआ था। इनके पिता का नाम त्रैलोक्यनाथ बोस व माता का नाम लक्ष्मीप्रिय देवी था। महज 6 वर्ष की उम्र में इनके माता पिता का साया इनके ऊपर से उठ गया। इनकी बहन ने इनका पालन पोषण किया, इनके जीवन पर स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने की तीव्र इच्छा जाग्रत हो रही थी, जब यह 9 वीं कक्षा में पहुँचे तब वर्ष 1905 में बंगाल के विभाजन की घोषणा अंग्रेजी हुकूमत ने कर दी अपनी शिक्षा को छोड़ बोस स्वतंत्रता के यज्ञ में अपना योगदान देने के लिए कूद पड़े। बंगाल विभाजन के विरोध में चलाये गये आन्दोलन में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। वर्ष 1905 में खुदीराम क्रांतिकारियों के द्वारा बनाये गए युगान्तर क्रांतिकारी दल का हिस्सा बन गए। 1907 को खुदीराम ने नारायणगढ़ रेलवे स्टेशन पर बंगाल के गवर्नर की विशेष ट्रेन पर हमला किया परन्तु गवर्नर बच गया। सन 1908 में उन्होंने दो अंग्रेज अधिकारियों वाट्सन और पैम्फायल्ट फुलर पर बम से हमला किया लेकिन वे भी बच निकले। 1908 में खुदीराम बोस के जीवन में निर्णायक पल आया जब उन्हें और दूसरे क्रांतिकारी प्रफुल्ल चाकी को मुजफ्फरपुर के जिला मजिस्ट्रेट किंग्सफोर्ड की हत्या का काम सौंपा गया। किंग्सफोर्ड की हत्या के पहले कई प्रयास हुए थे लेकिन सब असफल रहे। मुजफ्फरपुर में ट्रांसफर से पहले किंग्सफोर्ड बंगाल में मजिस्ट्रेट थे।

कलकत्ता (अब कोलकाता) में किंग्सफोर्ड चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट को बहुत सख्त और क्रूर अधिकारी माना जाता था। भारतीय क्रांतिकारियों को कठोर सजा और अत्याचारपूर्ण रवैये की वजह से उनके प्रति क्रांतिकारियों में गुस्सा था। क्रांतिकारियों ने उसकी हत्या का फैसला किया। इस काम के लिए खुदीराम बोस तथा प्रफुल्ल चाकी को चुना गया।दोनों क्रांतिकारी मुजफ्फरपुर पहुंचकर एक धर्मशाला में आठ दिन रहे। इस दौरान उन्होंने किंग्सफोर्ड की दिनचर्या और गतिविधियों पर पूरी नजर रखी। उनके बंगले के पास ही क्लब था। अंग्रेजी अधिकारी और उनके परिवार के लोग शाम को वहां जाते थे। 30 अप्रैल, 1908 की शाम किंग्सफोर्ड और उसकी पत्नी क्लब में पहुंचे।उनकी बग्घी का रंग लाल था और वह बिल्कुल किंग्सफोर्ड की बग्घी से मिलती जुलती थी। खुदीराम बोस और उनके साथी ने किंग्सफोर्ड की बग्घी समझकर उसपर बम फेंका, मगर दुर्भाग्य से उसमें बैठी दो महिलाओं की मृत्यु हो गई। इसका खुदीराम को भी बहुत दुःख हुआ। तिलक जी ने एक लेख लिखकर खुदीराम का समर्थन किया। इस पर अंग्रेजों ने उन्हें 6 वर्ष के लिए कठोर कारावास में भेज दिया। वे दोनों यह सोचकर भाग निकले कि किंग्सफोर्ड मारा गया है। पुलिस से बचने के लिए दोनों ने अलग-अलग राह पकड़ ली। पुलिस को इन दोनों पर शक हो गया था। पुलिस इनकी हर चौक चौराहे पर खोज करनी शुरू कर दी थी। सूचना देने वाले को 1000 रुपए का इनाम देने की घोषणा की गई। एक स्टेशन में पुलिस दरोगा को प्रफुल्ल चाकी पर शक हो गया और उन्हें घेर लिया गया। खुद को घिरा देख प्रफुल्ल चाकी ने खुद को गोली मार अपना बलिदान दे दिया।

1 मई को पुलिस ने खुदीराम बोस को गिरफ्तार कर लिया और मुजफ्फरपुर के जेल में बंद कर दिया और उन पर हत्या का मुकदमा चला। यह मुकदमा केवल पांच दिन चला। 8 जून,1908 को उन्हें अदालत में पेश किया गया और 13 जून को उन्हें मौत की सजा सुनाई गई। 11 अगस्त,1908 को उन्हें फांसी पर चढ़ा दिया गया।जब 13 जून 1908 को इस मामले में खुदीराम बोस को फांसी की सजा सुनाई गई तो उनके चेहरे पर कोई डर नहीं था। फैसला देने के बाद जज ने उससे पूछा, 'क्या तुम इस फैसले का मतलब समझ गए हो?' इस पर खुदीराम ने जवाब दिया, 'हां, मैं समझ गया, मेंरे वकील कहते हैं कि मैं बम बनाने के लिए बहुत छोटा हूं। अगर आप मुझे मौका दें तो मैं आपको भी बम बनाना सीखा सकता हूं।'

इस घटना के बाद बंगाल में छात्रों ने कई दिनों तक खुदीराम बोस की फांसी का विरोध किया लेकिन 11 अगस्त की सुबह 6 बजे भगवद्गीता हाथ में लेकर खुदीराम धैर्य के साथ फाँसी चढ़ गये। जब खुदीराम बलिदान हुए थे तब उनकी उम्र 19 साल थी ,उनके बलिदान के बाद बंगाल में कई दिनों तक स्कूल बंद रहे. वो लोगों में इतने लोकप्रिय हुए कि उस समय नौजवानों की धोती और कमीज पर 'खुदीराम' लिखा होता था। खुदीराम बोस का महान त्याग प्रत्येक भारतवासी के लिए प्रेरणापुंज है जो अनेक शताब्दियों तक राष्ट्रप्रेम की भावना प्रज्ज्वलित करता रहेगा।

"

मै बहुत गरीब हूँ, भारत माँ को देने के लिए मेरे पास सिर्फ मेरे प्राण है जिसे मैं दे रहा हूं।

- खुदीराम बोस

"

मोक्ष का मार्ग आत्मा के लिए उस आनंद का अनुभव करना है जो पहले से ही उसके भीतर है।

- जगद्गुरु भगवत्पाद माध्वाचार्य

नमामि अम्ब भारती!

• सुरेश कुमार शुक्ल 'संदेश'

हिमाद्रि उच्च भाल है,
सुकण्ठ विन्ध्य माल है
सघोष किंकणी बना
समुद्र रत्न - जाल है ।
प्रफुल्ल तारकालि नित्य आरती उतारती
नमामि अम्ब भारती !

निशान्त शान्त रूपिणी,
उषा प्रभा स्वरूपिणी,
प्रणम्य रम्य छवि छटा,
ममत्व तत्त्व धारिणी ।..
प्रभात पन्थ मन्द मन्द वायु है बुहारती
नमामि अम्ब भारती!

अखंड राष्ट्र अक्षरे !
सुसाम गान सस्वरे !
प्रचण्ड शक्ति वर्धिनी
नमामि हे वसुन्धरे !
विनम्र ज्योति ज्ञान की उभारती प्रसारती।
नमामि अम्ब भारती !

सुरापगा समुज्ज्वला,
सुकीर्ति पुण्य सत्फला,
अमाप पाप ध्वंसिनी उदार रम्य निर्मला,
रजत लहर लहर लहर मनोज्ञ छवि सँवारती ।
नमामि अम्ब भारती !

कलम आज उनकी जय बोल

• रामधारी सिंह 'दिनकर'

जला अस्थियाँ बारी-बारी
चिटकाई जिनमें चिंगारी,
जो चढ़ गये पुण्यवेदी पर
लिए बिना गर्दन का मोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

जो अगणित लघु दीप हमारे
तूफानों में एक किनारे,
जल-जलाकर बुझ गए किसी दिन
माँगा नहीं स्नेह मुँह खोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

पीकर जिनकी लाल शिखाएँ
उगल रही सौ लपट दिशाएं,
जिनके सिंहनाद से सहमी
धरती रही अभी तक डोल
कलम, आज उनकी जय बोल।

अंधा चकाचौंध का मारा
क्या जाने इतिहास बेचारा,
साखी हैं उनकी महिमा के
सूर्य चन्द्र भूगोल खगोल
कलम, आज उनकी जय बोल

भगवान का नाम लेते समय भगवान में इतना मग्न हो जाना चाहिए कि आंखों से आंसू छलकने लगें; वाणी आनंदमय हो सकती है और शरीर आध्यात्मिक और भावुक महसूस करने लगता है।

- चैतन्य महाप्रभु

हे... सागर !!!

- श्री नरेंद्र मोदी (मा. प्रधानमंत्री)

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!
तू धीर है, गंभीर है,
जग को जीवन देता, नीला है नीर तेरा।
ये अथाह विस्तार, ये विशालता,
तेरा ये रूप निराला।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

सतह पर चलता ये कोलाहल, ये उत्पात,
कभी ऊपर तो कभी नीचे।
गरजती लहरों का प्रताप,
ये तुम्हारा दर्द है, आक्रोश है
या फिर संताप ?
तुम न होते विचलित
न आशंकित, न भयभीत
क्योंकि तुममें है गहराई!

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

शक्ति का अपार भंडार समेटे,
असीमित ऊर्जा स्वयं में लपेटे।
फिर भी अपनी मयार्दाओं को बांधे,
तुम कभी न अपनी सीमाएं लांघे!
हर पल बड़प्पन का बोध दिलाते।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

तू शिक्षादाता, तू दीक्षादाता
तेरी लहरों में जीवन का
संदेश समाता।
न वाह की चाह,
न पनाह की आस,
बेपरवाह सा ये प्रवास।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

चलते-चलाते जीवन संवारती,
लहरों की दौड़ तेरी।
न रुकती, न थकती,
चरैवती, चरैवती, चरैवती का मंत्र सुनाती।
निरंतर... सर्वत्र!
ये यात्रा अनवरत,
ये संदेश अनवरत।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

लहरों से उभरती नई लहरें।
विलय में भी उदय,
जनम-मरण का क्रम है अनूठा,
ये मिटती-मिटाती, तुम में समाती,
पुनर्जन्म का अहसास कराती।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

सूरज तुम्हारा नाता पुराना,
तपता-तपाता,
ये जीवंत-जल तुम्हारा।
खुद को मिटाता, आसमान को छूता,
मानो सूरज को चूमता,
बन बादल फिर बरसता,
मधु भाव बिखेरता।
सुजलाम-सुफलाम सृष्टि सजाता।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

जीवन का ये सौंदर्य,
जैसे नीलकंठ का आदर्श,
धरा का विष, खुद में समाया,
खारापन समेट अपने भीतर,
जग को जीवन नया दिलाया,
जीवन जीने का मर्म सिखाया।

हे... सागर !!!
तुम्हें मेरा प्रणाम!

"केवल वह विज्ञान महान और सभी विज्ञानों में सर्वश्रेष्ठ है, जिसका अध्ययन मनुष्य को सभी प्रकार के दुखों से मुक्त करता है।

- तीर्थंकर महावीर स्वामी"

गुरुभक्ति

समर्थ गुरु रामदास का शिवाजी के प्रति अधिक स्नेह देख उनके अन्य शिष्य सोचते थे कि शिवाजी के छत्रपति होने से गुरु रामदास का उनके प्रति अधिक स्नेह है। आखिर एक दिन समर्थ गुरु ने अपने शिष्यों की इस गलत फहमी को दूर करने का निश्चय किया।

एक दिन समर्थ गुरु रामदास अपने शिष्यों के साथ जंगल के रास्ते गुजर रहे थे। तभी अचानक उनके पेट में दर्द शुरू हो गया। सभी शिष्य गुरुदेव के दर्द को लेकर बहुत परेशान थे। तब छत्रपति शिवाजी ने पूछा – "इसका कोई इलाज नहीं है क्या गुरुदेव ?"

समर्थ गुरु बोले – "शिवा ! इलाज तो है लेकिन वो तुम्हारे में से किसी के बस का नहीं है।" यह सुनकर सभी शिष्य एक स्वर में बोले – "गुरुदेव! आप बताइए, हम आपका इलाज जरुर करेंगे।"

तब समर्थ गुरु बोले – "अगर शेरनी के दूध की व्यवस्था हो सके तो मेरा दर्द दूर हो सकता है।"

यह सुनते ही सभी शिष्य पीछे हट गये। लेकिन छत्रपति शिवाजी ने साहस से आगे बढ़कर अपने गुरु का पात्र लेकर जंगल की ओर निकल गये। बहुत देर तक जंगल में भटकने के बाद शिवाजी ने देखा कि एक गुफा में गुर्राने की आवाज़े आ रही है। जब छत्रपति शिवाजी ने अन्दर जाकर देखा तो पाया कि एक शेरनी अपने बच्चों को दूध पिला रही है।

महाराज शिवाजी शेरनी से प्रार्थना करने लगे कि – " हे माँ ! मैं यहाँ तुम्हे या तुम्हारे बच्चों को नुकसान पहुँचाने नहीं आया बल्कि अपने गुरुदेव के पेट दर्द को दूर करने के लिए मुझे तुम्हारे थोड़े से दूध की आवश्यकता है। इसलिए कृपा करके मुझे दूध लेने दे।"

इतना सुनकर शेरनी श्री शिवाजी के पास आकर उनका पैर चाटने लगी। महाराज शिवाजी ने दूध निकाल लिया और शेरनी को प्रणाम करके चल दिए ।

जब महाराज शिवाजी समर्थ गुरु के पास पहुंचे तो गुरुदेव बोले – " देखा ! मुझे पता था, शिवा दूध लेकर जरुर आएगा। मेरा कोई पेट दर्द नहीं हो रहा है, ये सब तो तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए एक नाटक किया मैंने। अब समझे मुझे शिवा से अधिक स्नेह क्यों है !"

सभी शिष्यों ने अपने सिर झुका लिए।

"

जिसके पास बुद्धि नहीं है,
धन नहीं है और कोई
साहस नहीं है,
वो इंसान मूर्ख होता है।

- समर्थ गुरु रामदास

"

कभी भी अपनी शक्तियों पर घमंड न करें। क्योंकि, सभी के गुण अलग-अलग होते हैं। एक छोटी सी चींटी शकर के दानों को बिन सकती है, लेकिन एक हाथी ये काम नहीं कर सकता है।

- संत रविदास

विवेकानंद-रामकृष्ण संवाद

रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानंद के हर प्रश्न का समाधान कर उनकी बुद्धि को भक्ति में बदल दिया था। यहां प्रस्तुत हैं रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के बीच हुए एक अद्भुत संवाद के अंश...

स्वामी विवेकानंद : मैं समय नहीं निकाल पाता। जीवन आपाधापी से भर गया है।

रामकृष्ण परमहंस : गतिविधियां तुम्हें घेरे रखती हैं, लेकिन उत्पादकता आजाद करती है।

स्वामी विवेकानंद : आज जीवन इतना जटिल क्यों हो गया है?

रामकृष्ण परमहंस : जीवन का विश्लेषण करना बंद कर दो। यह इसे जटिल बना देता है। जीवन को सिर्फ जियो।

स्वामी विवेकानंद : फिर हम हमेशा दुःखी क्यों रहते हैं?

रामकृष्ण परमहंस : परेशान होना तुम्हारी आदत बन गई है, इसी वजह से तुम खुश नहीं रह पाते।

स्वामी विवेकानंद : अच्छे लोग हमेशा दुःख क्यों पाते हैं?

रामकृष्ण परमहंस : हीरा रगड़े जाने पर ही चमकता है। सोने को शुद्ध होने के लिए आग में तपना पड़ता है। अच्छे लोग दुःख नहीं पाते बल्कि परीक्षाओं से गुजरते हैं। इस अनुभव से उनका जीवन बेहतर होता है, बेकार नहीं होता।

स्वामी विवेकानंद : आपका मतलब है कि ऐसा अनुभव उपयोगी होता है?

रामकृष्ण परमहंस : हां, हर लिहाज से अनुभव एक कठोर शिक्षक की तरह है। पहले वह परीक्षा लेता है और फिर सीख देता है।

स्वामी विवेकानंद : समस्याओं से घिरे रहने के कारण हम जान ही नहीं पाते कि किधर जा रहे हैं?

रामकृष्ण परमहंस : अगर तुम अपने बाहर झांकोगे तो जान नहीं पाओगे कि कहां जा रहे हो। अपने भीतर झांको। आखें दृष्टि देती हैं। हृदय राह दिखाता है।

स्वामी विवेकानंद : क्या असफलता सही राह पर चलने से ज्यादा कष्टकारी है?

रामकृष्ण परमहंस : सफलता वह पैमाना है, जो दूसरे लोग तय करते हैं। संतुष्टि का पैमाना तुम खुद तय करते हो।

स्वामी विवेकानंद : कठिन समय में कोई अपना उत्साह कैसे बनाए रख सकता है?

रामकृष्ण परमहंस : हमेशा इस बात पर ध्यान दो कि तुम अब तक कितना चल पाए, बजाय इसके कि अभी और कितना चलना बाकी है। जो कुछ पाया है, हमेशा उसे गिनो; जो हासिल न हो सका उसे नहीं।

स्वामी विवेकानंद : लोगों की कौन सी बात आपको हैरान करती है?

रामकृष्ण परमहंस : जब भी वे कष्ट में होते हैं तो पूछते हैं, 'मैं ही क्यों?' जब वे खुशियों में डूबे रहते हैं तो कभी नहीं सोचते, 'मैं ही क्यों?'

स्वामी विवेकानंद : मैं अपने जीवन से सर्वोत्तम कैसे हासिल कर सकता हूं?

रामकृष्ण परमहंस : बिना किसी अफसोस के अपने अतीत का सामना करो। पूरे आत्मविश्वास के साथ अपने वर्तमान को संभालो। निडर होकर अपने भविष्य की तैयारी करो।

स्वामी विवेकानंद : एक आखिरी सवाल। कभी-कभी मुझे लगता है कि मेरी प्रार्थनाएं बेकार जा रही हैं?

रामकृष्ण परमहंस : कोई भी प्रार्थना बेकार नहीं जाती। अपनी आस्था बनाए रखो और डर को परे रखो। जीवन एक रहस्य है जिसे तुम्हें खोजना है। यह कोई समस्या नहीं जिसे तुम्हें सुलझाना है। मेरा विश्वास करो- अगर तुम यह जान जाओ कि जीना कैसे है तो जीवन सचमुच बेहद आश्चर्यजनक है।

"भगवान तो सबके मन में हैं लेकिन सबका मन भगवान में नहीं लगा है, इसीलिए हम कष्ट और दुर्गति भोगते हैं।

- रामकृष्ण परमहंस"

जो सत्य का पालन करता है, वही सज्जन है।

- संत तुकाराम

कला कुंज

कृति
सत्यम फैशन इंस्टिट्यूट,
नोएडा (उ.प्र.)

प्रियम मिश्र
दिल्ली विश्वविद्यालय

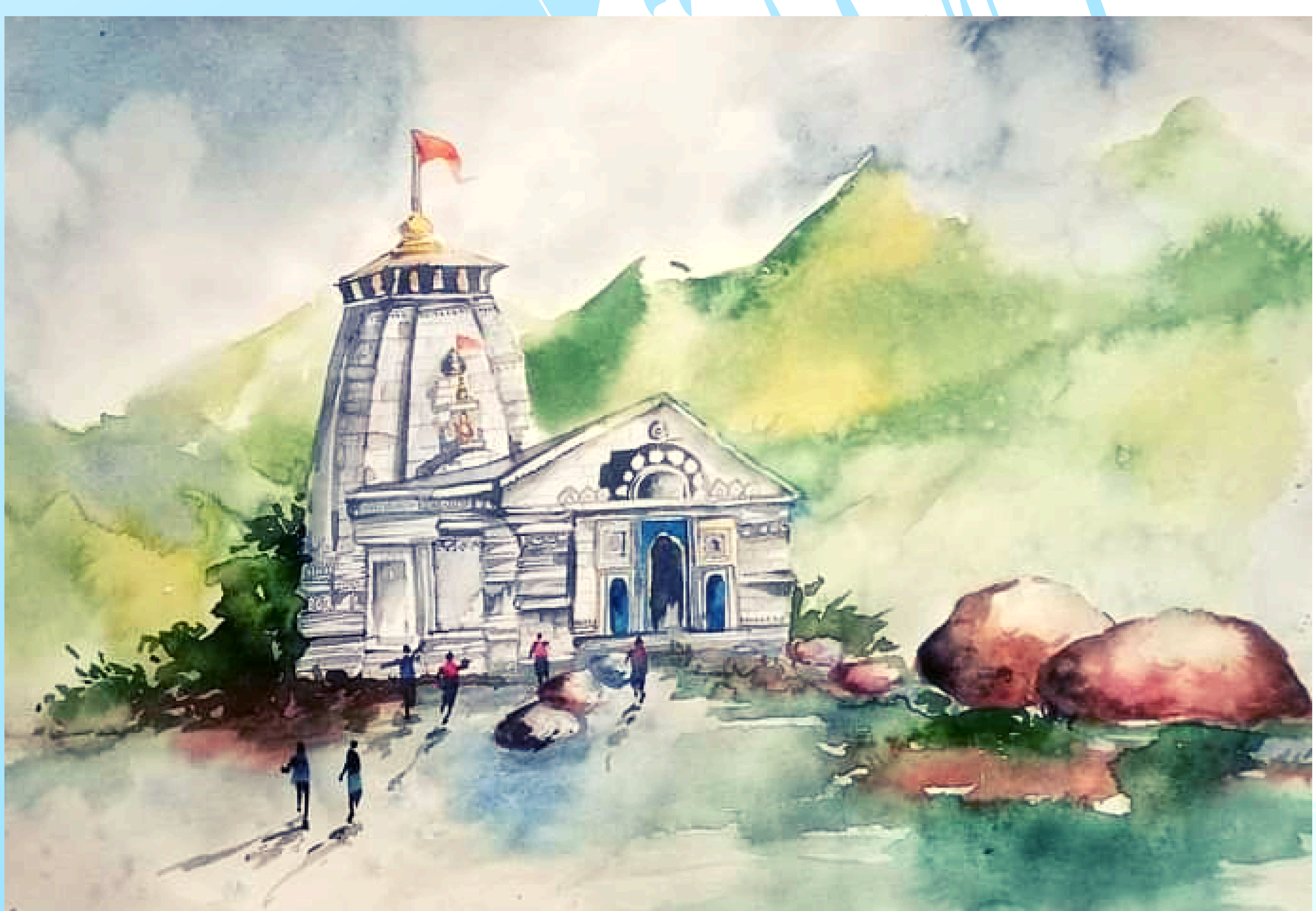

राजेन्द्र सोनी •चित्रकार
rajendrasoni426@gmail

मैया! मैं नहिं माखन खायो।
जानि परै ये सखा सबै मिलि
मेरो मुख लपटायो॥
देखि तुही छींके पर भाजन
ऊँचे धरि लटकायो।
हौं जु कहत नान्हें कर अपने मैं
कैसे करि पायो॥
मुख दधि पोंछि बुद्धि इक
कीन्हीं दोना पीठि दुरायो।
डारि सांटि मुसुकाइ जशोदा
स्यामहिं कंठ लगायो॥
बाल बिनोद मोद मन मोह्यो
भक्ति प्रताप दिखायो।
सूरदास जसुमति को यह सुख
सिव बिरंचि नहिं पायो॥

- भक्तशिरोमणि सूरदास

तुलसी मीठे बचन ते सुख उपजत चहुं ओर ।
बसीकरन इक मंत्र है परिहरू बचन कठोर ।।

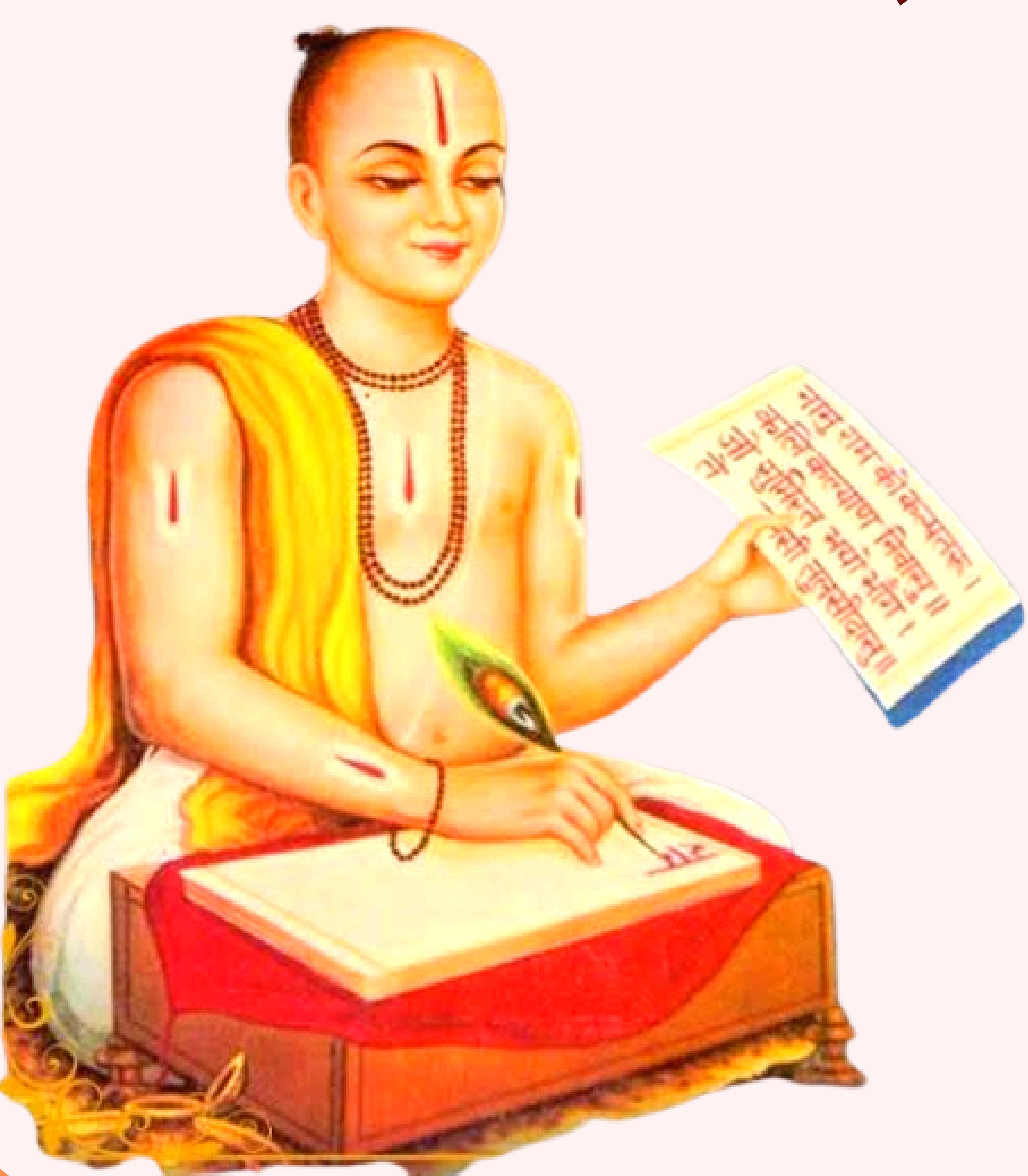

तुलसीदास जी कहते हैं कि मधुर वाणी सभी ओर सुख का वातावरण पैदा करती हैं। यह हर किसी को अपनी और सम्मोहित करने का यही एक कारगर मंत्र है इसलिए हमें कटु वाणी त्याग कर मधुरता से बातचीत करना चाहिए।

- गोस्वामी तुलसीदास

हनुमान प्रसाद पोद्दार (भाई जी) का योगदान

• अभिज्ञ महाजन

आज गीता प्रेस गोरखपुर का नाम किसी भी भारतीय के लिए अजनबी नहीं है। सनातन हिन्दू संस्कृति को मानने वाला विश्व का शायद ही कोई परिवार होगा जो गीता प्रेस गोरखपुर के नाम से परिचित न हो। रामायण,महाभारत,गीता,पुराण और उपनिषद से लेकर प्राचीन भारत के ऋषि-मुनियों की कहानियों तक, देश और दुनिया भर में इन सभी साहित्यिक सामग्री को पहुंचाने का श्रेय, संस्थापक सदस्य हनुमान प्रसाद पोद्दार को ही जाता है। गीता प्रेस गोरखपुर। इतिहास में ऐसा उदाहरण मिलना मुश्किल है जिसने किसी भी प्रचार से दूर रहकर हिंदू संस्कृति की मान्यताओं को निस्वार्थ भाव से घर-घर पहुंचाने में योगदान दिया हो।

भाई जी के नाम से प्रसिद्ध हनुमान प्रसाद पोद्दार का जन्म 1892 में राजस्थान के रतनगढ़ में हुआ था। उनके पिता का नाम लाला भीमराज अग्रवाल और माता का नाम रिखीबाई था। ये दोनों भगवान हनुमान के समर्पित भक्त थे, इसलिए उन्होंने अपने पुत्र का नाम हनुमान प्रसाद रखा। जब ये 2 साल के थे तब इनकी माता का देहांत हो गया जिसके बाद इनकी परवरिश इनकी दादी ने की। हनुमान प्रसाद बचपन से ही अपनी दादी द्वारा रामायण,महाभारत,उपनिषद और पुराणों की कहानियाँ पढ़ते और सुनते थे, जिसका उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। भाई जी को 'निम्बार्क' खंड के 'संत ब्रजदास जी' ने दीक्षा दी थी।

जब देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था, तब भाई जी स्वतंत्रता आंदोलन के क्रांतिकारी अरविंद घोष, देशबंधु चितरंजन दास, पं. झाबेरमल शर्मा के संपर्क में आए और स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े। इसके बाद भाई जी लोकमान्य तिलक और गोपालकृष्ण गोखले से भी मिले। 1906 में उन्होंने कपड़ों में गाय की चर्बी के प्रयोग के विरुद्ध आन्दोलन चलाया और विदेशी वस्तुओं तथा विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के लिए संघर्ष छेड़ा। कम उम्र में ही उन्होंने खादी और अन्य स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करना शुरू कर दिया था। स्वतंत्रता आंदोलन और कलकत्ता में क्रांतिकारियों के साथ काम करने के एक मामले में, तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने हनुमान प्रसाद पोद्दार सहित कई प्रमुख व्यापारियों को देशद्रोह के आरोप में गिरफ्तार कर जेल भेज दिया था।

जेल में भाई जी हनुमान जी की पूजा करने लगे। इसके बाद उन्हें अलीपुर जेल में नजरबंद कर दिया गया। वहां वे सुबह 3 बजे से अपनी दिनचर्या पूरी करते थे और पूरा समय ध्यान में बिताते थे। फिर, उन्हें घर में नजरबंद करके पंजाब की एक जेल में भेज दिया गया। वहां एक होम्योपैथिक डॉक्टर जेल में बंदियों के स्वास्थ्य की जांच के लिए आया करते थे। भाई जी ने उस डॉक्टर से होम्योपैथी की विशिष्ट जानकारी सीखी और होम्योपैथी की पुस्तकों का अध्ययन करने के बाद स्वयं रोगियों का इलाज करने लगे। बाद में, वे जमनालाल बजाज की प्रेरणा से मुंबई आ गए। वहां वे वीर सावरकर, नेताजी सुभाष चंद्र बोस, महादेव देसाई और कृष्णदास जाजू जैसी हस्तियों के संपर्क में आए। मुंबई में वे अपने चचेरे भाई जयदयाल गोयनका के गीता पाठ से बहुत प्रभावित हुए। गीता के प्रति उनके प्रेम और लोगों में गीता के प्रति जिज्ञासा देखकर भाई जी ने संकल्प लिया कि वे श्रीमद्भगवद्गीता को कम से कम कीमत पर लोगों को उपलब्ध कराएंगे। फिर उन्होंने गीता पर एक भाष्य लिखा, जिसकी 5,000 प्रतियाँ बिकीं। भाई जी को इस बात का गहरा दुःख हुआ कि किताब में बहुत सारी गलतियाँ थीं, जिसके बाद उन्होंने एक संशोधित संस्करण जारी किया लेकिन उसमें भी गलतियाँ दोहराई गईं। इससे भाई जी को बहुत दुख हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि जब तक उनका अपना प्रेस नहीं होगा, तब तक काम संतोषजनक ढंग से नहीं होगा। यही छोटा सा संकल्प ही गीता प्रेस गोरखपुर की स्थापना का आधार बना। उस समय समस्या यह थी कि प्रेस की स्थापना कहाँ की जाए। उनके मित्र घनश्याम दास जालान, गोरखपुर में व्यवसाय करते थे और उन्होंने गोरखपुर में एक प्रेस स्थापित करने का आश्वासन दिया था। इसके बाद मई 1922 में गीता प्रेस की स्थापना हुई। भाई जी ने 'कल्याण' (उनकी प्रथम पत्रिका) को एक आदर्श एवं रोचक पत्रिका बनाने के लिए देश भर के महात्माओं, लेखकों एवं संतों आदि को पत्र लिखे और इसके लिए विभिन्न विषयों पर लेख आमंत्रित किए।साथ ही उन्होंने अच्छे-से-अच्छे चित्रकारों से देवी-देवताओं के आकर्षक चित्र बनवाये और उन्हें 'कल्याण' में प्रकाशित कराया। कल्याण की सामग्री के संपादन से लेकर उसके स्वरूप को अंतिम रूप देने तक, उन्होंने प्रतिदिन अठारह घंटे काम किया। उन्होंने 'कल्याण' को केवल हिंदू धर्म की पत्रिका के रूप में मान्यता देने के बजाय उसमें सभी धर्मों के विद्वानों, जैन संतों, रामानुज, निम्बार्क, माधव आदि के लेख प्रकाशित किए। भारतीय परिवारों में 'कल्याण' एक लोकप्रिय पत्रिका बन गई और आज भी कल्याण धार्मिक जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

भाई जी ने बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम, द्वारका, कलादी श्रीरंगम आदि स्थानों पर वेदों और भवनों की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अपने जीवनकाल में भाई जी ने साहित्य के 25 हजार से अधिक पृष्ठों की रचना की। राधा माधव चिंतन, महाभाव कल्लोलिनी, नारद भक्ति सूत्र, श्री रस पंच ध्यायी, सुखी बनो आदि कुछ प्रसिद्ध पुस्तकें उन्होंने लिखीं।

ब्रिटिश काल में गोरखपुर में उनकी धर्म और साहित्य सेवा तथा गोरखपुर में उनकी लोकप्रियता को देखते हुए तत्कालीन ब्रिटिश कलेक्टर पेडली ने उन्हें 'राय साहब' की उपाधि से सम्मानित करने का प्रस्ताव रखा, लेकिन भाई जी ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इसके बाद ब्रिटिश कमिश्नर होबार्ट ने 'राय बहादुर' की उपाधि देने का प्रस्ताव रखा लेकिन भाई जी ने इस प्रस्ताव को भी मानने से इनकार कर दिया। महात्मा गांधी ने भी भारत के गौरवशाली इतिहास और लोगों के बीच दार्शनिक विरासत पर गर्व करने के उनके काम के लिए उनकी प्रशंसा की। 1992 में, भारत सरकार ने उनके सम्मान में एक डाक टिकट जारी किया। 22 मार्च, 1971 को उन्होंने इस नश्वर शरीर को त्याग दिया और अपने पीछे 'गीता प्रेस गोरखपुर' नामक एक केंद्र छोड़ गए, जो दुनिया भर में सनातन हिंदू संस्कृति को फैलाने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

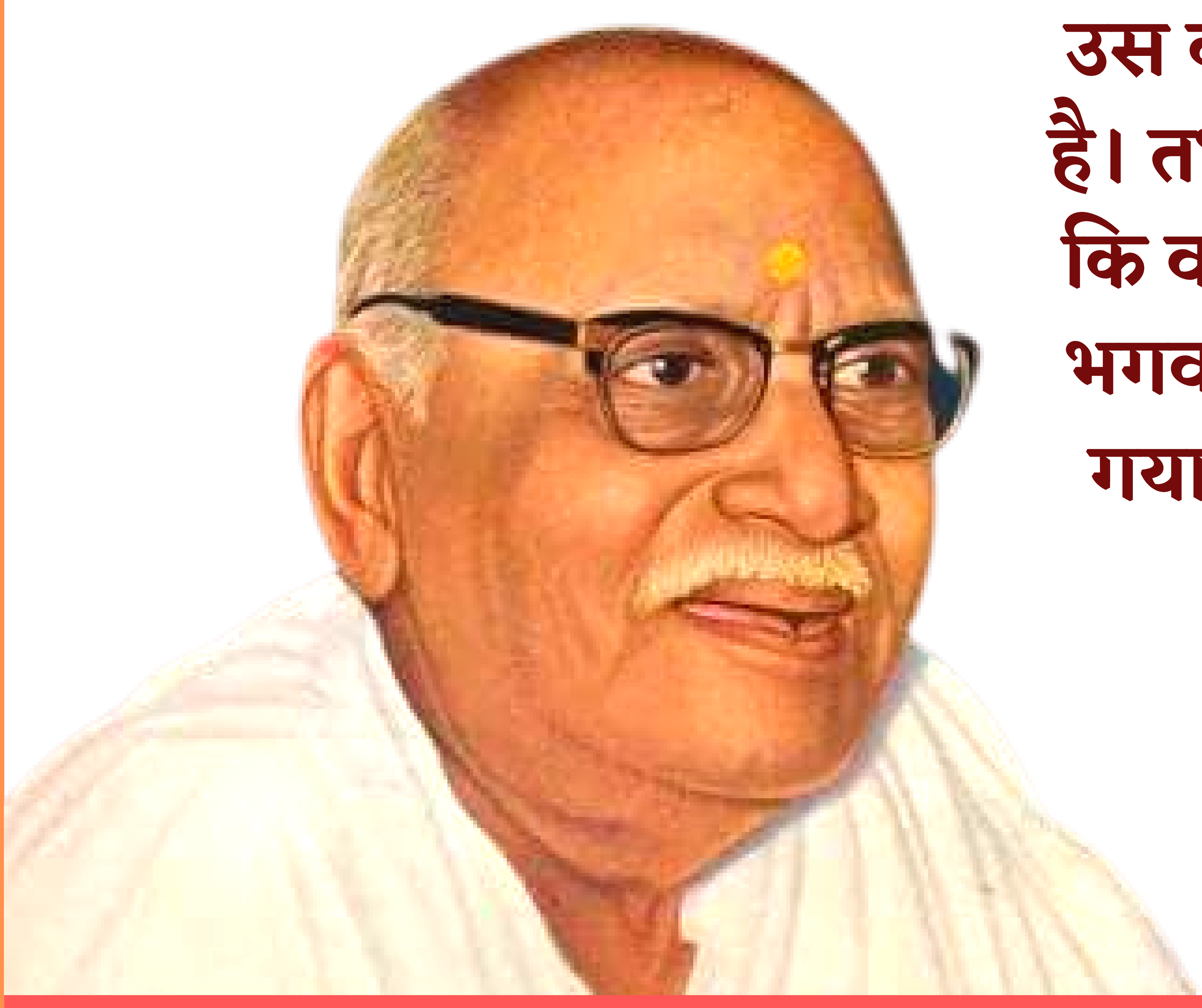

"दूसरा भरोसा कोई रहे ही नहीं, तभी उस कृपा का चमत्कार देखने में आता है। तभी मनुष्य को यह अनुभव होता है कि वह जिसे असंभव मानता था, वही भगवत्कृपा से अनायास ही सम्भव हो गया और भगवत्कृपा का द्वार सबके लिए खुला है।"

\- हनुमान प्रसाद पोद्दार "भाईजी"

महाराजा सूरजमल की चिट्ठी अफगान आक्रांता अहमद शाह अब्दाली के नाम,जिसे पढ़कर वह कांप उठा

महाराजा सूरजमल ने अफगान आक्रांता अहमद शाह अब्दाली की धमकी के जवाब में ऐसी चिट्ठी लिखी थी, जिसे पढ़कर उसका माथा चकरा गया था। महाराजा सूरजमल ने जो जवाब दिया उसमें विनय और अभिमान दोनों का ही अनूठा मिश्रण था।

'मैं आम-सा किसान हूं, जिसकी हिंदुस्तान में कोई खास हैसियत नहीं। आप जैसा महान शासक बड़े लाव-लश्कर के साथ मेरा सामना करना चाहता है...सिर्फ नियति ही जानती है कि युद्ध का अंजाम क्या होगा! यदि आप मुझसे जीत भी गए तो आपकी प्रतिष्ठा में शायद ही कोई इजाफा हो। लेकिन अगर ईश्वर की मेहरबानी से युद्ध का परिणाम विपरीत रहा तो आपकी शौहरत झटके में ख़त्म हो जाएगी। रहा सवाल मेरे क़त्ल और मेरे राज्य को बरबाद करने का, तो वीरों को इस बात का कोई डर नहीं होता है। मेरे लिए इससे बढ़कर कोई वरदान नहीं हो सकता कि मैं शहादत का पान करूं, जो कि देर-सवेर मुझे करना ही है......रही बात भरतपुर, डीग और कुम्हेर के मेरे किलों की, जिन्हें हुज़ूर के सरदारों ने मकड़ी के जाले-सा कमजोर बतलाया है, उनकी परख जंग के बाद ही हो पाएगी। भगवान ने चाहा तो वे सिकंदर के गढ़ जैसे अजेय ही रहेंगे।'

सच्ची सेवा

एक बार गुरु नानक देव जी यात्रा पर निकले। इस दौरान वह एक गांव में पहुंचे। उनके साथ उनके चार प्रिय शिष्य थे। जब नानक जी गांव में पहुंचे, तो उनका खूब स्वागत हुआ। उसी गांव में एक गरीब महिला रहती थी। उसने नानक को शिष्यों सहित अपने घर आने का निमंत्रण दिया नानक जी तुरंत उस महिला के घर पहुंचे।

नानक को अपने घर देखकर महिला की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उसने बड़े प्यार से उनके लिए शर्बत बनाया। पर उसके घर छन्नी नहीं थी। इसलिए उसने पुरानी व गंदी दिखने वाली धोती के टुकड़े से शर्बत को छान दिया। अब उसने गुरु नानक व उनके शिष्यों को शरबत पीने को दिया। गुरुजी तो वह शर्बत आराम से पी गए। जब शिष्य ने गुरुजी को शर्बत पीते हुए देखा, तो उन्होंने भी मन मसोसकर शर्बत पी लिया। घर से निकलने के बाद एक शिष्य को उल्टी हो गई। उसने तुरंत शर्बत को दोष दिया। इसके कुछ देर बाद ही दूसरे शिष्य को भी उल्टी हो गई। फिर तीसरा शिष्य भी रास्ते में उल्टी कर बैठा। अंत में चौथे शिष्य ने भी शर्बत को दोष देते हुए उल्टी कर दी।

अब चारो शिष्यों ने व्यंग्यात्मक लहजे में गुरु जी को कहा, "अब आपकी बारी है" नानक जी ने कहा नहीं शिष्यों, आपने तो उस महिला द्वारा दिया गया गन्दा शरबत पिया है। जबकि मैंने उस महिला द्वारा दिया गया सम्मान और प्रेम का घूंट पिया है। मुझे क्यों उल्टी होगी? गुरु जी के यह वचन सुनकर शिष्य दंग रह गए। समझाते हुए कहा, संसार में प्रेम व स्नेह से बड़ी कोई चीज नहीं है।

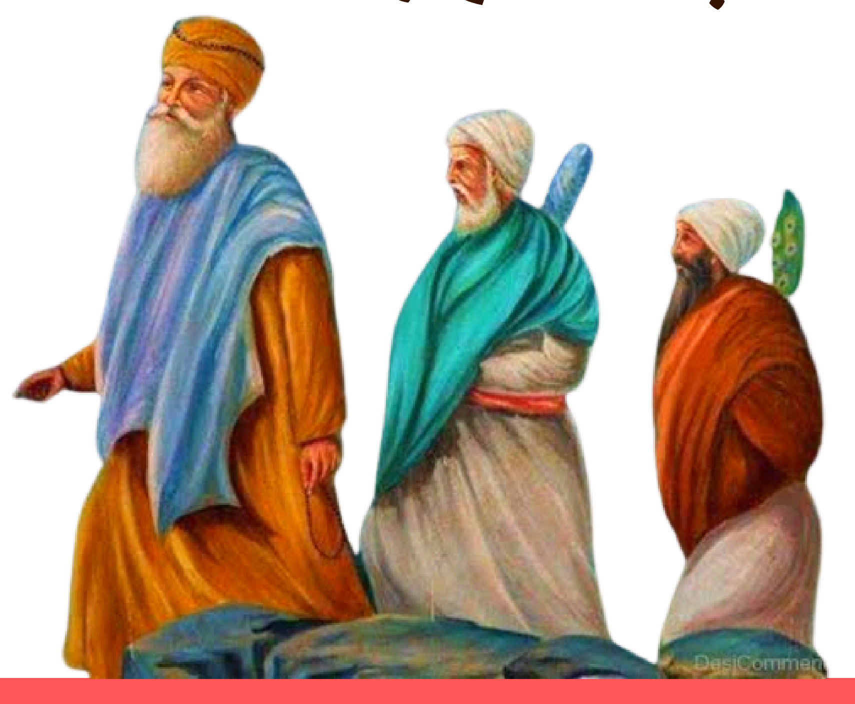

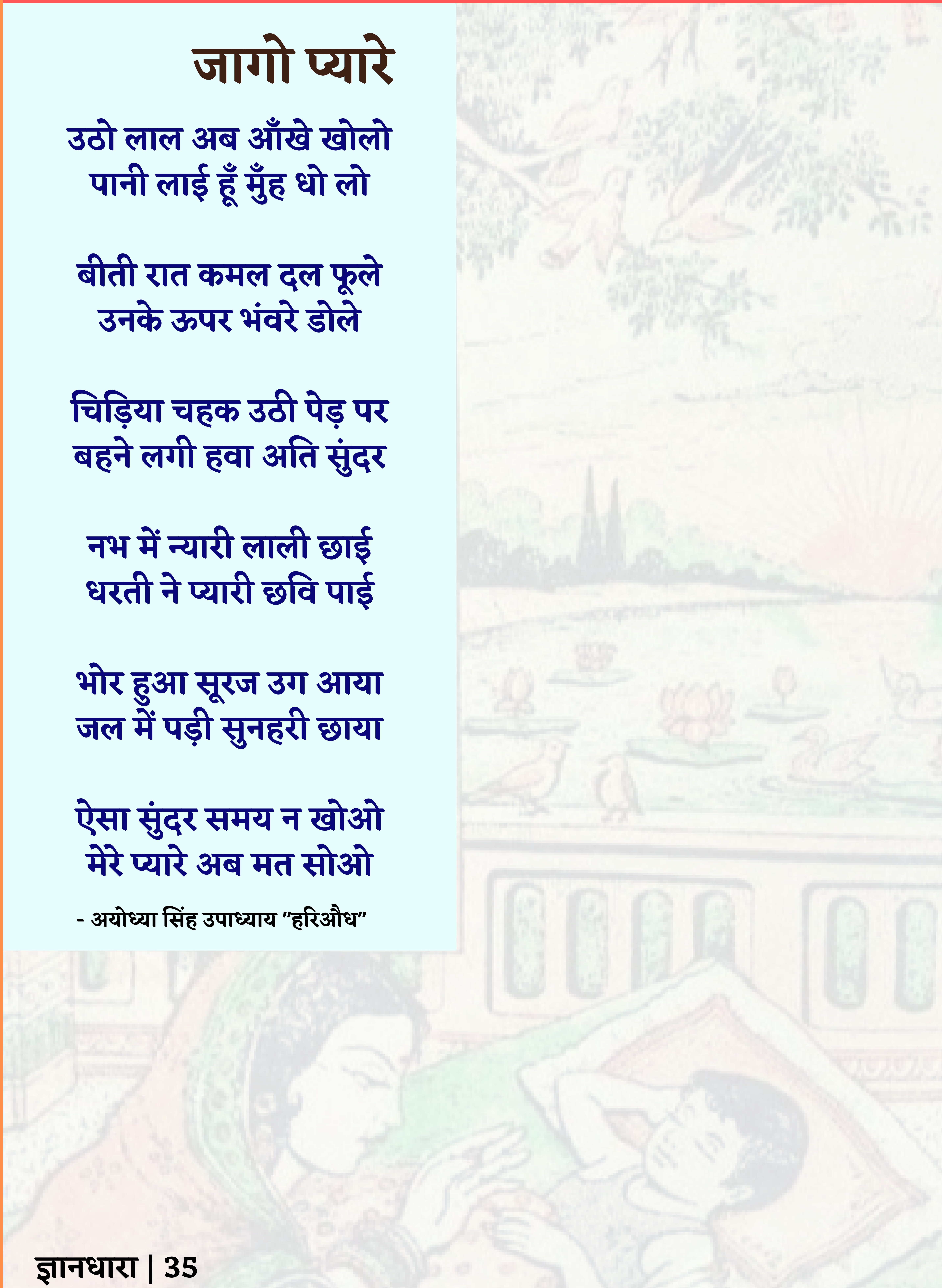

जागो प्यारे

उठो लाल अब आँखे खोलो
पानी लाई हूँ मुँह धो लो

बीती रात कमल दल फूले
उनके ऊपर भंवरे डोले

चिड़िया चहक उठी पेड़ पर
बहने लगी हवा अति सुंदर

नभ में न्यारी लाली छाई
धरती ने प्यारी छवि पाई

भोर हुआ सूरज उग आया
जल में पड़ी सुनहरी छाया

ऐसा सुंदर समय न खोओ
मेरे प्यारे अब मत सोओ

- अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"

प्रयाण गीत

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से,
प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला,
स्वतंत्रता पुकारती॥

अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो॥

असंख्य कीर्ति रश्मियाँ,
विकीर्ण दिव्य दाह-सी।
सपूत मातृभूमि के,
रुको न शूर साहसी॥

अराति सैन्य सिन्धु में, सुबाड़वाग्नि से जलो।
प्रवीर हो जयी बनो, बढ़े चलो बढ़े चलो॥

- जयशंकर प्रसाद

आचार्य अभिनव गुप्त

इन महान आचार्य ने एक ओर 'ध्वन्यालोक' पर 'लोचन' तथा 'नाट्य-शास्त्र' पर 'अभिनव-भारती' टीका का प्रणयन कर साहित्य पर महान उपकार किया, दूसरी ओर 'तंत्रलोक' आदि नाना ग्रंथों तथा टीका-ग्रंथों की रचना करके भारतीय दर्शन तथा तंत्र शास्त्र की महती सेवा की। अभिनव गुप्त भारतीय शास्त्रीय साहित्यिक परंपरा के वह देदीप्यमान नक्षत्र हैं, जिसकी प्रभा से भारतीय नाट्य तथा ध्वनि के दुर्गम मार्ग प्रशस्त हुए। एक ओर टीका ग्रंथों की रचना करके उन्होंने शास्त्रीय ग्रंथों को सुग्राह्य बनाया तो दूसरी ओर मौलिक ग्रंथों को रच कर उन्होंने अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से साहित्यिक तथा दार्शनिक जगत को चमत्कृत किया।

भारतीय विद्याओं के इस महापंडित का जन्म कश्मीर में हुआ, तथापि आचार्य अभिनव गुप्तपाद के पूर्वज 200 वर्ष पूर्व ही कन्नौज से कश्मीर में आए थे| उस समय कन्नौज नगर अत्यंत समृद्ध एवं शक्तिशाली साम्राज्य था। 8वीं शताब्दी में सम्राट ललितादित्य ने कन्नौज पर आक्रमण करके महाराजा यशोवर्मन को पराजित किया| राजा ललितादित्य विद्वत-प्रिय थे। सम्राट वहां के एक विद्वान ब्राह्मण अत्रिगुप्त को कश्मीर ले गए और उनके लिए एक भवन बनवाकर आदर के साथ प्रचुर संपत्ति तथा जागीर देकर वितस्ता नदी के किनारे निवास प्रदान किया। पं. अत्रिगुप्त के वंश में ही 200 वर्ष बाद इस नाना शास्त्रों में निष्णात महापंडित अभिनव गुप्त का जन्म हुआ। 'तंत्रालोक' में आचार्य अभिनव गुप्त ने अपने पितामह वराह गुप्त, पिता नृसिंह गुप्त या चुलुकख तथा अपने जन्म का वर्णन किया है।संस्कृत-परंपरा के कवियों, लेखकों तथा विद्वानों के साथ यह विडंबना रही है कि उन्होंने अपनी रचनाओं में अपने जीवन काल के विषय में संकेत प्रायः नहीं दिए। यही कारण है कि उनका जीवन-वृत्त तथा स्थिति काल अतीत के गहवर में कहीं खो जाता है तथा अटकलों और अनुमानों का विषय ही बन जाता है। इसके विपरीत इस महान विद्वान ने अपने ग्रंथ-लेखन के पर्याप्त संकेत प्रदान किए हैं जिनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य अभिनव गुप्तपाद का स्थिति काल दसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध तथा 11 वीं शताब्दी का पूर्वार्ध था| पिता नृसिंह गुप्त विद्वान थे, जिनसे आचार्य अभिनव गुप्त ने व्याकरण- शास्त्र का अध्ययन किया। उनकी माता का नाम विमलकला या विमला था। आचार्य का पूरा नाम अभिनव गुप्तपाद था। उनके नाम के विषय में भी रोचक उल्लेख प्राप्त होता है। 'काव्यप्रकाश' के टीकाकार वामन के एक उल्लेख के अनुसार वे अपने सहाध्यायियों को बहुत परेशान किया करते थे।

सर्प के समान भय देने के कारण उनके गुरुओं ने उनको यह नाम प्रदान किया। सर्प के पैर गुप्त होते हैं अतः सर्प को संस्कृत में गुप्तपाद भी कहा जाता है। गुरु प्रदत्त इस नाम को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करते हुए स्वयं उन्होंने भी उल्लेख किया है –

'अभिनवगुप्तस्यकृतिः सेयं यस्योदिता गुरुभिराख्या'

अभिनव गुप्त का बाल्यकाल अत्यंत ही कष्टकारक रहा। बाल्यावस्था में ही उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। माता के स्वर्गवास के पश्चात् पिता ने भी वैराग्य धारण कर लिया। इन नकारात्मक प्रतीत होने वाली घटनाओं ने भले ही अभिनव गुप्त को स्वाभाविक रूप से आहत किया हो किंतु इससे उनके जीवन की दिशा परिवर्तित हो जाने से उनकी रचना धर्मी प्रतिभा से दार्शनिक तथा भक्ति संबंधी साहित्य का महान उपकार हुआ।अब वे सरस साहित्य के अध्ययन के स्थान पर धर्म, दर्शन तथा भक्ति में रम गए। आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वे कठोर साधना में लीन रहे।अपने जीवन का अंतिम भाग उन्होंने श्रीनगर तथा गुलबर्ग के मध्य स्थान के 5 मील दूर भैरव नाम के ग्राम में बिताया। यहां भैरव नाम की नदी बहती है और यहीं पर भैरव गुफा भी है। ऐसा कहा जाता है कि अपने जीवन के अंतिम समय में वे इसी पवित्र गुफा में प्रविष्ट हुए और फिर लौट कर नहीं आए। यह भी कहा जाता है कि उनकी इस अंतिम यात्रा में उनके 1200 शिष्य भी उन्हें विदा करने आए। इस प्रकार त्याग, तप, विद्या और साधना का वह मूर्तिमान स्वरूप अपनी आभा को छोड़ कर इस धराधाम से अदृश्य लोक की ओर प्रस्थान कर गया।उस समय कश्मीर प्रदेश संस्कृत-विद्याओं का एक बड़ा केंद्र था। यहां विभिन्न विद्याओं तथा शास्त्रों के मूर्धन्य पंडित थे। अभिनव गुप्त का विद्या-व्यसन इतना प्रबल था कि जिस-जिस शास्त्र के जो भी प्रसिद्ध विद्वान कश्मीर प्रदेश में थे, उन विभिन्न विद्वानों के पास जाकर उन्होंने तत्त्व शास्त्र का अध्ययन किया।अपने 20 गुरुओं का आचार्य ने स्वयं उल्लेख किया है जिसमें 7 आचार्यों का उल्लेख उन्होंने शास्त्रों सहित किया है। यथा-व्याकरण के गुरु इनके पिता नृसिंह गुप्त, द्वैताद्वैत-तंत्र के गुरु वामनाथ,द्वैतवादी शैव-संप्रदाय के गुरु बूतिराज तनय, प्रत्यभिज्ञा-क्रम तथा त्रिक दर्शन के गुरु लक्ष्मण गुप्त, ध्वनि-सिद्धांत के गुरु भट्ट इंदुराज। ब्रह्मविद्या के गुरु भूतिराज| नाट्य-शास्त्र के आचार्य भट्ट तोत्त। अपने शेष 13 गुरुओं का भी उन्होंने एक श्लोक में उल्लेख किया है। यथा-

"श्रीचन्द्रशर्मभवभक्तिविलासयोगा-
नन्दाभिनन्दशिवशक्तिविचित्रनाथाः;
अन्येअपि धर्मशिववामनबोधभट्ट-
श्री भूतेशभास्करमुख प्रमुखता महान्तः"

यहां पर यह भी उल्लेखनीय है कि अभिनव गुप्त नामक एक अन्य आचार्य भी रहे हैं| उनका जन्म कामरूप (असम) में हुआ था। वे शाक्त थे तथा ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने वेदांत सूत्रों पर शाक्त भाष्य भी लिखा था। नाम-साम्य के कारण दोनों दार्शनिक आचार्यों के एक ही व्यक्ति होने का भ्रम होता है किंतु वास्तव में दोनों भिन्न थे। माध्वाचार्य ने उनके शंकराचार्य से पराजित होने का उल्लेख भी किया है। उल्लेखनीय है कि शंकराचार्य हमारे द्वारा वर्णित अभिनव गुप्तपाद से अनेक वर्ष पूर्व (जगद्गुरु शंकराचार्य का वर्ष ईसा से पूर्व का है) हुए थे। अतः शंकराचार्य से पराजित वे आचार्य इनसे भिन्न थे। आचार्य ने अपने अध्ययन और साधना के बल पर एक विशाल ग्रंथ-राशि साहित्य-संसार को समर्पित की। संस्कृत की, आचार्य-परंपरा के इस महामनीषी ने जो कृतियां साहित्य-संसार को समर्पित की, उनकी नाम -परिगणना से ही आचार्य की बहुमुखी प्रतिभा और अदृष्य वैदुष्य का स्वतः अनुमान किया जा सकता है। आचार्य द्वारा प्रणीत साहित्य का यह वैशिष्य है कि उनकी परवर्ती कृतियों में प्रसंगानुसार पूर्व कृतियों का नामोल्लेख भी प्राप्त होता है, जिससे ग्रंथ-लेखन पौर्वापर्य क्रम का निर्धारण करना सरल हो जाता है।

इन कृतियों का काल क्रम से उल्लेख यहां पर किया जाता है- बोधपञ्चदशिका परात्रींशिका-विवृत्ति, मालिनी-विजय-वार्तिक, तंत्रालोक, तंत्र-सार, तंत्रवट-धानिका, ध्वन्यालोक-लोचन, अभिनव -भारती, भगवद्गीतार्थसंग्रह, परमार्त-सार, ईश्वर-प्रत्यभिज्ञा-विवृत्ति-विमर्शिनी-बृहती, क्रम-स्त्रोत्र, देहस्थ-देवता-चक्र-स्तोत्र, भैरव-स्तोत्र, परमार्थ-द्वाद्शिका, अनुभव-निवेदन, परमार्थ-चर्चा, महोपदेशविंशतिका, अनुत्तराष्टिका, तथोंच्चय, घटकर्पर-कुलक-वृत्ति, क्रमकेलि, शिव-दृष्टयालोचन, पूर्वपज्चिका, पदार्थप्रवेशनिर्णय-टीका, प्रकीर्णक-विवरण, प्रकरणक-विवरण, काव्यकौतुक-विवरण, कथामुखटीका, लघ्वी प्रक्रिया, भेदवाद-विदारण, देवी-स्तोत्र-विवरण, तत्वार्थ-प्रकाशिका, शिवशक्त्यविनाभाव-स्तोत्र, बिम्बप्रतिबिम्बवाद, परमार्थसंग्रह, अनुत्तरशतक, पकरण-स्तोत्र, नाट्यलोचन, अनुत्तरतत्वविमर्शिनी।

उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त प्रथम 11 ग्रंथ स्वतंत्र रूप से प्रकाशित हो चुके हैं। बारहवां ग्रंथ 'ईश्वर प्रत्यभिज्ञा-विवृत्ति' जिस पर आचार्य ने टीका लिखी है, वह अनुपलब्ध है| क्रम-संख्या 13 से 20 तक लघुकाय ग्रंथ हैं, जिनका प्रकाशन डॉ. कांतिलाल पांडेयजी के अभिनवगुप्त-विषयक शोध-प्रबंध के परिशिष्ट के रूप में हुआ है। 'तंत्रोच्चय' तथा 'घटकर्पर-कुलक-वृत्ती' के संप्रति उपलब्ध पाठ का कर्तृत्व कतिपय कारणों से संदिग्ध है। आगे के 13 ग्रंथ ऐसे हैं, जिनके उल्लेख आचार्य के उपलब्ध ग्रंथों में प्राप्त होते हैं किंतु वे आज किसी भी रूप में उपलब्ध नहीं होते। शेष अंतिम छह का केवल नामोल्लेख ही सूची-पत्रों में प्राप्त होता है।

ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि अपने माता पिता से वियुक्त हो जाने के बाद अभिनव गुप्तपादाचार्य विरक्त हो गए और सरस साहित्य के अध्ययन और प्रणयन को छोड़ कर दर्शन में 'घटकर्पर-कुलक-वृत्ती' सहित उनके केवल 3 ही ग्रंथ प्राप्त होते हैं तथापि उनकी ख्याति प्रमुख रूप सा साहित्य के क्षेत्र में है। साहित्य के क्षेत्र में उनकी कीर्ति के आधार -स्तंभ हैं 'ध्वन्यालोक' पर 'लोचन' टीका तथा 'नाट्य-शास्त्र' पर 'अभिनव-भारती' नाम की टीका।

कश्मीर शैव प्रत्यभिज्ञा दर्शन के क्षेत्र में आचार्य अभिनव गुप्तपाद का विशिष्ट योगदान है। यह दर्शन शैवाद्वैत दर्शन के नाम से भी जाना जाता है। ईश्वर -प्रत्यभिज्ञावमर्शिणी में आचार्य ने अपनी गुरु-परंपरा का भी उल्लेख किया है। इस दर्शन के संस्थापक आचार्य त्र्यंबक थे। आगे चल कर सोमानंद नामक आचार्य ने इस पद्धति को आगे बढ़ाते हुए 'शिव-दृष्टि' नामक ग्रंथ का प्रणयन किया। उदयाकर के पुत्र उत्पल ने 190 कारकों में प्रत्यभिज्ञा -सूत्र की रचना की। साथ ही उन्होंने इस ग्रंथ पर वृत्ति की रचना की। उसी शिष्य -परंपरा में लक्ष्मण गुप्त हुए। आचार्य लक्ष्मण गुप्त का कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। उन्हीं लक्ष्मण गुप्त का शिष्य अभिनव गुप्त हुआ। "मालनी-विजय-वार्तिक" में अभिनव गुप्ताचार्य ने अपने गुरु के वैदुष्य की अत्यधिक प्रशंसा की है। प्रत्यभिज्ञा-दर्शन के क्रम को आगे बढ़ाते हुए आचार्य अभिनव गुप्तपाद ने विशेष रूप से दो महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रणयन किया। प्रथम उत्पलदेव-चरित्र 'प्रत्यभिज्ञा-कारिका' पर 'ईश्वर-प्रत्यभिज्ञा-वमर्शिणी' है तो दूसरी उत्पलदेव की टीका पर 'ईश्वर-प्रत्यभिज्ञा-वमर्शिणी-वृत्ति' है।दार्शनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण उनका तीसरा ग्रंथ "भगवद्गीतार्थसंग्रह" है।

'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा-वमर्शिणी' जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि आचार्य ने उत्पलपादाचार्य के सूत्र-ग्रंथ 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा-सूत्र' पर 'वमर्शिणी' टीका लिखी। यही 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञा-वमर्शिणी'के नाम से जानी जाती है। सूत्रों के तात्पर्य को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित करने वाला यह ग्रंथ प्रकाशित है। इस ग्रंथ का आकार 4 हजार श्लोक-प्रमाण है, अतः इसे चतु:साहस्री तथा अपने दूसरे विवृत्ति-ग्रंथ की अपेक्षा दृष्टि से लघ्वीविमर्शिणी भी कहा जाता है।ईश्वरप्रत्यभिज्ञा-वमर्शिणी में यह उल्लेख किया जा चुका है कि आचार्य के प्रगुरु उत्पलाचार्य ने अपने सूत्र-ग्रंथ 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञासूत्र' पर स्वयं एक विवृत्ति लिखी थी।

इसी ग्रंथ पर आचार्य अभिनव गुप्त ने वृत्ति की रचना की जो 'ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविवृत्ति-वमर्शिणी' के नाम से प्रसिद्ध है।

इस ग्रंथ को लघ्वीविमर्शिणी की अपेक्षा-दृष्टि से बृहती विमर्शिणी भी कहा जाता है। इस ग्रंथ का परिणाम 18 हजार श्लोक-प्रमाण है। अतः इसे अष्टादश-साहस्री भी कहा जाता है। स्पष्ट है कि आचार्य ने इस ग्रंथ में उत्पलाचार्य के मंतव्य को स्पष्टता से प्रतिपादित किया है। यहां यह उल्लेखनीय है कि उत्पलाचार्य द्वारा अपने ग्रंथ पर लिखी गई विवृत्ति संप्रति उपलब्ध नहीं है। अतः इस ग्रंथ का महत्व स्वतःसिद्ध है।

भारत की नाना विद्याओं के अद्भुत समाराधक आचार्य अभिनव गुप्तपाद द्वारा प्रणीत साहित्य निश्चय ही विलक्षण है। उनकी लेखनी इतनी प्रभावी तथा सशक्त थी कि वाङ्मय के जिस क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी कलम चलाई, अध्येता उन्हें उसी का प्रामाणिक अधिकारी विद्वान समझते रहे। निश्चय ही विभिन्न विद्याओं के अधिकारी विद्वानों से तत्तत शास्त्र के अध्ययन का ही ऐसा विलक्षण परिणाम है। यह भी उल्लेखनीय है कि उन्होंने वाङ्मय की सेवा करते हुए जो टीका-संपत्ति प्रदान की, उसका महत्व किसी भी मौलिक ग्रंथ से कहीं अधिक है।

आचार्य के जीवन तथा साहित्य के पर्यालोचन से स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य अभिनव गुप्त का सम्पूर्ण जीवन साधना से परिपूर्ण था। मानव की व्यक्तिगत साधना का पुण्य भले ही व्यक्ति-विशेष की ऐहिक तथा पारलौकिक समृद्धि का कारण बनता है किंतु आचार्य ने अपनी जीवन साधना और तप से वाङ्मय की जो सेवा की है, वह अद्भुत है। अपनी लेखनी की शक्ति से उन्होंने जिस साहित्य का प्रणयन किया, उससे धर्म, दर्शन, मंत्र, संस्कृति तथा साहित्य की महती सेवा हुई। उस महान साहित्य के अध्ययन और पर्यालोचन से सदैव साहित्यकारों, दार्शनिकों, साधकों तथा जिज्ञासुओं का मार्गदर्शन होता रहेगा।

अच्छे व्यवहार का रहस्य

एक बार की बात है संत तुकाराम अपने आश्रम में बैठे हुए थे। तभी उनका एक शिष्य, जो स्वभाव से थोड़ा क्रोधी था। उनके समक्ष आया और बोला, ”गुरूजी, आप कैसे अपना व्यवहार इतना मधुर बनाये रहते हैं, ना आप किसी पे क्रोध करते हैं और ना ही किसी को कुछ भला-बुरा कहते हैं? कृपया अपने इस अच्छे व्यवहार का रहस्य बताइए।“

संत बोले,” मुझे अपने रहस्य के बारे में तो नहीं पता, पर मैं तुम्हारा रहस्य जानता हूँ !”
“मेरा रहस्य! वह क्या है गुरु जी?”, शिष्य ने आश्चर्य से पूछा।
“तुम अगले एक हफ्ते में मरने वाले हो!”, संत तुकाराम दुखी होते हुए बोले।
कोई और कहता तो शिष्य ये बात मजाक में टाल सकता था, पर स्वयं संत तुकाराम के मुख से निकली बात को कोई कैसे काट सकता था? शिष्य उदास हो गया और गुरु का आशीर्वाद ले वहां से चला गया।

उस समय से शिष्य का स्वभाव बिलकुल बदल सा गया। वह हर किसी से प्रेम से मिलता और कभी किसी पे क्रोध न करता, अपना ज्यादातर समय ध्यान और पूजा में लगाता। वह उनके पास भी जाता जिससे उसने कभी गलत व्यवहार किया हो और उनसे माफ़ी मांगता। देखते-देखते संत की भविष्यवाणी को एक हफ्ते पूरे होने को आये। शिष्य ने सोचा चलो एक आखिरी बार गुरु के दर्शन कर आशीर्वाद ले लेते हैं। वह उनके समक्ष पहुंचा और बोला,

“गुरु जी, मेरा समय पूरा होने वाला है, कृपया मुझे आशीर्वाद दीजिये!”

“मेरा आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे साथ है पुत्र। अच्छा, ये बताओ कि पिछले सात दिन कैसे बीते? क्या तुम पहले की तरह ही लोगों से नाराज हुए, उन्हें अपशब्द कहे?”, संत तुकाराम ने प्रश्न किया।

“नहीं-नहीं, बिलकुल नहीं। मेरे पास जीने के लिए सिर्फ सात दिन थे, मैं इसे बेकार की बातों में कैसे गँवा सकता था? मैं तो सबसे प्रेम से मिला, और जिन लोगों का कभी दिल दुखाया था उनसे क्षमा भी मांगी।”, शिष्य तत्परता से बोला।

संत तुकाराम मुस्कुराए और बोले, “बस यही तो मेरे अच्छे व्यवहार का रहस्य है। मैं जानता हूँ कि मैं कभी भी मर सकता हूँ, इसलिए मैं हर किसी से प्रेमपूर्ण व्यवहार करता हूँ, और यही मेरे अच्छे व्यवहार का रहस्य है..”

शिष्य समझ गया कि संत तुकाराम ने उसे जीवन का यह पाठ पढ़ाने के लिए ही मृत्यु का भय दिखाया था, उसने मन ही मन इस पाठ को याद रखने का प्रण किया और गुरु के दिखाए मार्ग पर आगे बढ़ गया।

“काम, क्रोध एवं लोभ जैसे शत्रुओं से सदैव सावधान रहो, हमेशा बचकर रहो।”

- जगद्गुरु भगवत्पाद रामानुजाचार्य

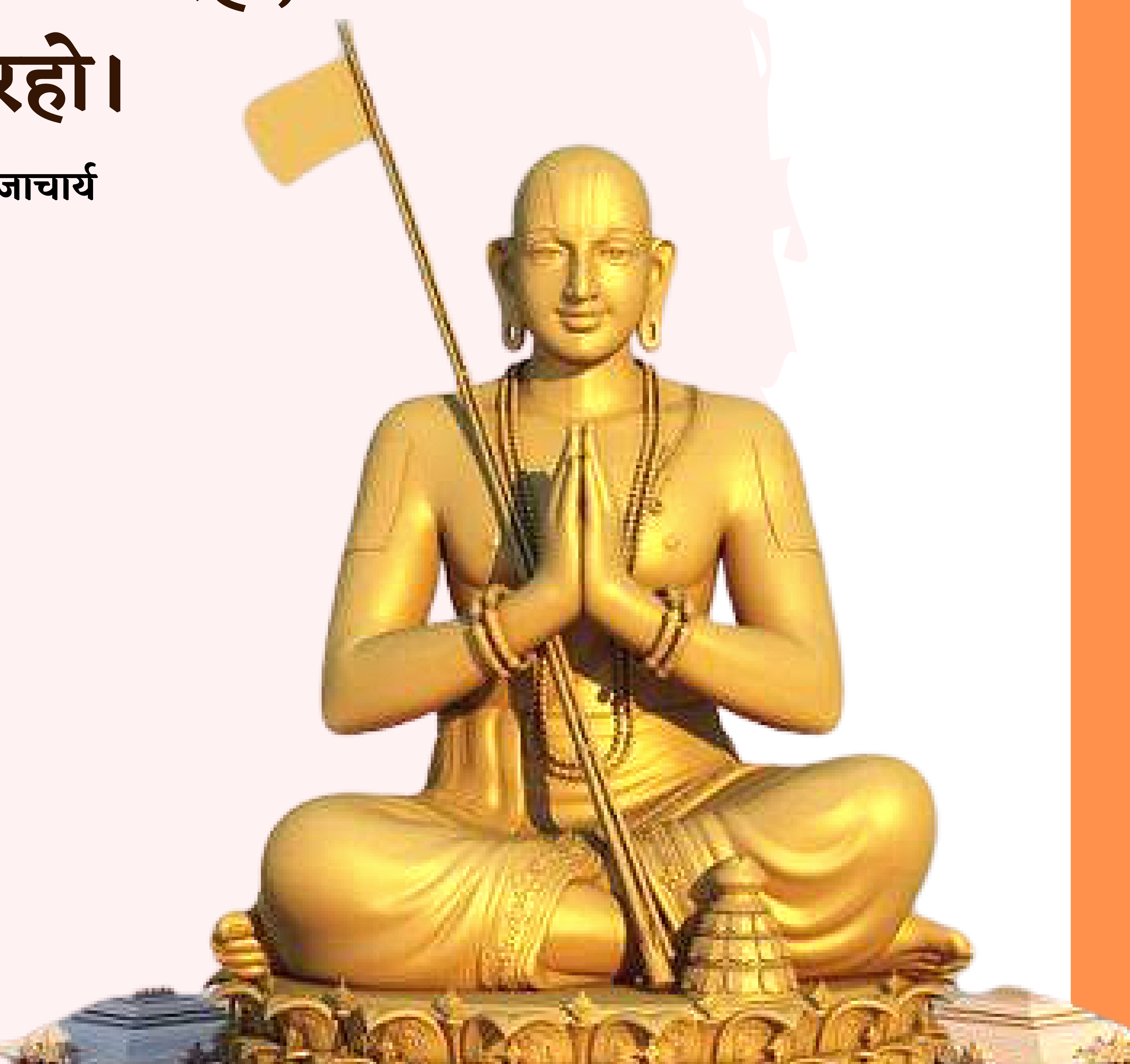

सिंगोली का युद्ध

प्रत्येक हिंदू सरदार, जिसने कभी अपनी मातृभूमि से बर्बर इस्लामी शासन के समूल सफाया करने का स्वप्न देखा था, वह मेवाड़ की भूमि से इस्लामी कट्टरपंथियों पर विजय की आशा मात्र से ही उल्लासित हो गया।इस आशा और उत्साह के बल पर आमजन, सामंतों और सरदारों के सहयोग से हम्मीर ने तुगलक की सेना के सम्मुख एक विशाल सेना खड़ी कर ली और अब तुगलक के आक्रमण की प्रतीक्षा करने के बजाय उसी दिशा में चल पड़े, जहाँ तुगलकी सेना का डेरा लगा हुआ था, ताकि युद्ध का समय व शैली हम्मीर ही निश्चित कर सकें।मेवाड़ की ओर आने के तीन रास्ते हैं, पश्चिमी रास्ता है मारवाड़ की ओर से, बीच का रास्ता है दिवेर की ओर से और पूर्वी रास्ता है अरावली के पठारों में होकर तुगलक को उसके सलाहकारों ने मूर्खतापूर्ण परामर्श दिया कि उन्हें पूर्व की ओर से मेवाड़ जाना चाहिए।

तुगलक को यह पता ही नहीं था कि मेवाड़ के संकीर्ण रास्तों और पर्वतीय क्षेत्रों में बने छोटे-छोटे दर्रों में फँसकर उसका संख्याबल निष्फल और निष्क्रिय हो जाएगा। तुगलक ने चंबल नदी के किनारे 'सिंगोली' नामक स्थान पर अपना डेरा डाला। तुगलक 70,000 घुड़सवार व 20,000 पैदल सैनिकों के साथ रात्रि विश्राम में था। 20,000 घुड़सवारों व 10,000 पैदल सैनिकों के साथ हम्मीर ने तुगलक के डेरे को चुपचाप घेर लिया।" हम्मीर ने रात के अंधेरे में आक्रमण किया और तुगलक के अधिकांश सेनानायकों को मार दिया। 1336 ईसवी के उस यशस्वी दिन, महाराणा हम्मीर ने मेवाड़ से दुगनी बड़ी सेना की पूरी तरह से नष्ट कर दिया।

हम्मीर ने मालदेव के पुत्र हरिदास को एकल युद्ध में मार गिराया और तुगलक को बंदी बना लिया। यह निश्चित ही तथाकथित दिल्ली सल्तनत के लिए लज्जा का विषय था, जिनके नामों के आगे न जाने कितने प्रकार की उपाधियाँ लगाई जाती थीं। यद्यपि इस तथाकथित सल्तनत का प्रभाव केवल कुछ सौ वर्ग किलोमीटर तक ही सीमित थी कालांतर में महाराणा हम्मीर की इस बड़ी विजय और उनके शौर्य की गाथा को भार इतिहास के पन्नों से ही हटा दिया गया और फलस्वरूप उनकी स्मृति आम जनमानस से भी शनैः-शनैः विस्मृत होती चली गई। विचित्र बात है कि अधिकांश भारतीय इतिहासकारों ने मध्यकालीन भारत के शोध का आधार मुख्यतः फारसी और अरबी इतिहासकारों द्वारा लिखित संस्मरणों को ही बनाया है।

ऐसा ही एक लेखक था- फरिश्ता, जिसका उद्धरण भारतीय इतिहासकार समय- समय पर अपने लेखों में करते हैं। किंतु फरिश्ता अपने धर्म के प्रति समर्पित था और इसी कारण उसने सिंगोली के इस महती युद्ध को अपने संस्मरणों में कहीं लिखा ही नहीं भारत का इतिहास लिखनेवालों से यह पूछा जाना चाहिए कि मेवाड़ के इतिहासकारों, वहाँ के शिलाखंडों व लोकश्रुति को पूरी तरह क्यों उपेक्षित किया गया? (गौरीशंकर ओझा के अनुसार, कुंभलगढ़ के जैन मंदिर की एक प्रशस्ति में हम्मीर की इस विजय का स्पष्ट उल्लेख मिलता है) सिंगोली की विजय कोई छिटपुट संघर्ष नहीं, बल्कि एक युग प्रवर्तक घटना थी। हम्मीर ने संख्याबल में अपने से दुगनी सेना को पूरी तरह नष्ट किया था। मेवाड़ ने जब अपनी खोई ख्याति और सम्मान पुनः प्राप्त किया तो उसके विषय में केवल कुछ जैन मंदिरों में शिलालेखों इत्यादि से ज्ञात होता है और वही सब कालांतर में मेवाड़ की गौरवगाथा के पन्नों पर भी लिखा गया।

प्रबुद्ध जनों और इतिहासकारों के लिए यह लज्जा का विषय है कि उन्होंने भी भारतीय इतिहास के साथ हुए इस मिथ्याचार में भाग लिया। इस पूरे उपक्रम का उद्देश्य क्या रहा होगा, यह केवल वे भलीभांति बता सकते हैं। यदि शिक्षक और इतिहासकार इस तरह से सत्य के हनन में सहभागी बनें तो उस समाज का पतन और ह्रास होना निश्चित है। मेवाड़ के हम्मीर जैसे महान योद्धाओं के इतिहास को समय और कुटिल इतिहासकारों के कुप्रयासों से बचाए रखने का श्रेय जाता है मेवाड़ के इतिहासकारों, लोक गायकों, कथाकारों तथा मंदिरों में उकेरे गए शिलालेखों को, जिन्होंने मेवाड़ के जनमानस में महाराणा हम्मीर के जीवन व शौर्य की गाथा के संस्मरणों को अपनी कथाओं और गीतों के माध्यम से जीवित रखा। यही प्रकरण महाराणा कुंभा,महाराणा सांगा व प्रताप के विजय अभियान के साथ भी हुआ, जहाँ वामी इतिहासकारों ने मेवाड़ के इन यशस्वी महाराणाओं की विजयगाथाओं को पूरा ही पोंछ डाला। किंतु हमारे देश के लेखकों व इतिहासकारों ने मेवाड़ की वंशावलियों, ख्यातियों व लोक इतिहास की पूर्ण उपेक्षा क्यों की? केवल वामपंथी लेखकों के पूर्वग्रहों से भरे लेखन को ही सत्य बनाकर क्यों निरीह हिंदुओं के गले उतारा गया? इस पर एक निष्पक्ष जाँच कमीशन बैठना चाहिए।

हम्मीर ने तुगलक को बंदी बनाकर छह महीने तक चित्तौड़ के दुर्ग में बंद रखा। तथाकथित दिल्ली सल्तनत का राजा, चित्तौड़ के दुर्ग में हम्मीर द्वारा एक श्वान की भाँति बंदी बनाया हुआ था, पर दिल्ली सल्तनत के किसी भी सेनापति ने अपने शाह को हम्मीर के हाथों से छुड़वाने का प्रयास तक नहीं किया। यह थी ' दिल्ली सल्तनत '! एक निकृष्ट श्रेणी का झूठ, जो हिंदुओं के सबल संघर्ष को नीचा दिखाकर बर्बर लुटेरों को महिमामंडित करने के लिए गढ़ा गया।

क्या यह समझना कठिन है कि चौदहवीं शताब्दी में भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली राज्य मेवाड़ था ? तुगलक को क्षमादान के बदले में हम्मीर को अजमेर-रणथंभौर-नागमंड और शिवपुरी इत्यादि समर्पित करने पड़े। इसके अतिरिक्त पचास लाख रुपए नकद और सौ हाथी दंडस्वरूप देने पड़े। साथ ही हम्मीर ने पाँच सहस्र घोड़े भी तुगलक से वसूले। हम्मीर ने मेवाड़ के दरबार में बंदी तुगलक से कहा, "यदि अब तूने कभी चित्तौड़ पर आक्रमण किया तो मैं चित्तौड़ की रक्षा दुर्ग के अंदर से नहीं, बल्कि बाहर आकर करूँगा।" पराजित और अपमानित तुगलक को हम्मीर ने जाने दिया। हम्मीर की यह विजय अत्यधिक महत्त्व का विषय होने के पश्चात् भी भुला दी गई और इतिहास ने उस महान "हिंदू राजा को भुला ही दिया, जिसने अकेले ही चौदहवीं शताब्दी में हिंदुओं के धर्मध्वज की ऊँचा किया और अपनी शक्ति की अमिट छाप छोड़ी। तुगलक ने इस करारी पराजय के बाद राजस्थान की पवित्र भूमि की ओर मुड़कर नहीं देखा तथा दक्षिण में उत्पात मचाने चला गया।

तुगलक पूरा जीवन एक इस्लामी राज्य बनाने के प्रयास में इधर-उधर भागता फिरा हिमाचल में काँगड़ा के राजा पृथ्वी चंद ने उसे बुरी तरह पराजित किया तथा उसके एक लाख से अधिक सैनिक मार डाले। दक्षिण में विजयनगर के संस्थापक दो हिंदू भाइयों, हरिहर व बुक्का ने भी तुगलक को पराजित किया। 1351 ईसवी में सिंध में। तुर्क गुलामों के साथ संघर्ष में तुगलक की मृत्यु हुई।

(डॉ. ओमेंद्र रत्नू की पुस्तक "महाराणा:सहस्त्रों वर्षों का धर्मयुद्ध" के पृष्ठ सं.: 80 से उद्धृत)

वीरशिरोमणि महाराणा हम्मीर सिंह

स्वामी रामतीर्थ अमेरिका में

जापान से स्वामी रामतीर्थ स्टीमर द्वारा अमेरिका रवाना हुये। यात्रा-काल में समुद्र की तरंगों के समान राम के हृदय में भी आनन्द की तरंगें हिलोरें ले रही थीं। बाहर तो महान प्रशान्त सागर लहरा रहा था और राम के भीतर आनन्द और प्रेम का अनन्त जलधि उमड़ रहा था। स्टीमर के सानफ्रान्सिस्को पहुँचने पर सारे यात्री उतरने की हड़बड़ी में पड़े हुए थे किन्तु राम आनन्दविभोर होकर डेक पर ही चहलकदमी कर रहे थे। उनकी इस निश्चिन्तता और बेफिक्री को एक अमेरिकन बड़े ध्यान से देख रहा था। उसे बहुत कौतूहल हुआ और उसने राम के समीप पहुँच कर जिज्ञासा की, "महाशय जी, आपका सर-सामान कहाँ है ?"

स्वामी जी ने उत्तर दिया, "मेरे पास कोई भी सर-सामान नहीं है। जो कुछ हैं, वह सब मैं ही हूँ।"

अमेरिकन ने पुनः जिज्ञासा की, "आपके रुपये-पैसे कहाँ हैं ?" स्वामी राम का संक्षिप्त उत्तर था, "मैं रुपये-पैसे अपने पास रखता ही नहीं।" अमेरिकन का कुतूहल और बढ़ा और उसने प्रश्न किया, "फिर आप रहते किस प्रकार हैं?"

स्वामी जी ने निश्चिन्त भाव से उत्तर दिया, "मैं तो सभी को प्रेम करता हूँ और उसी पर अवलम्बित रहता हूँ। जब मुझे प्यास लगती है तब कोई न कोई जल भरा गिलास मेरे पास हाजिर कर देता है, और जब भूखा होता हूँ, तब कोई न कोई रोटी लिए मेरे पास पहुँच जाता है।"

"क्या आपके मित्र अमेरिका में हैं?'

"हाँ-हाँ, एक अमेरिकन से भलीभाँति परिचित हूँ, और वह तुम्हीं हो।" इतना कहते हुये स्वामी राम ने उसके कन्धे पर अपना हाथ रख दिया। उनके स्पर्श मात्र से अमेरिकन को यह अनुभूति हुई कि वह स्वामी जी का बहुत दिनों का साथी है। बाद में वह स्वामी जी का अत्यंत प्रशंसक हो गया।

उसने स्वामी जी के सम्बन्ध में अपने भाव इस भाँति अभिव्यक्त किये, "वे हिमालय से उद्भूत ज्ञान की मशाल हैं। उन्हें आग जला नहीं सकती, शस्त्र-अस्त्र उन्हें काट नहीं सकते। उनके नेत्रों से निरन्तर आनन्दाश्रु की वर्षा होती रहती है। उनकी उपस्थिति मात्र से नया जीवन प्राप्त होता है।"

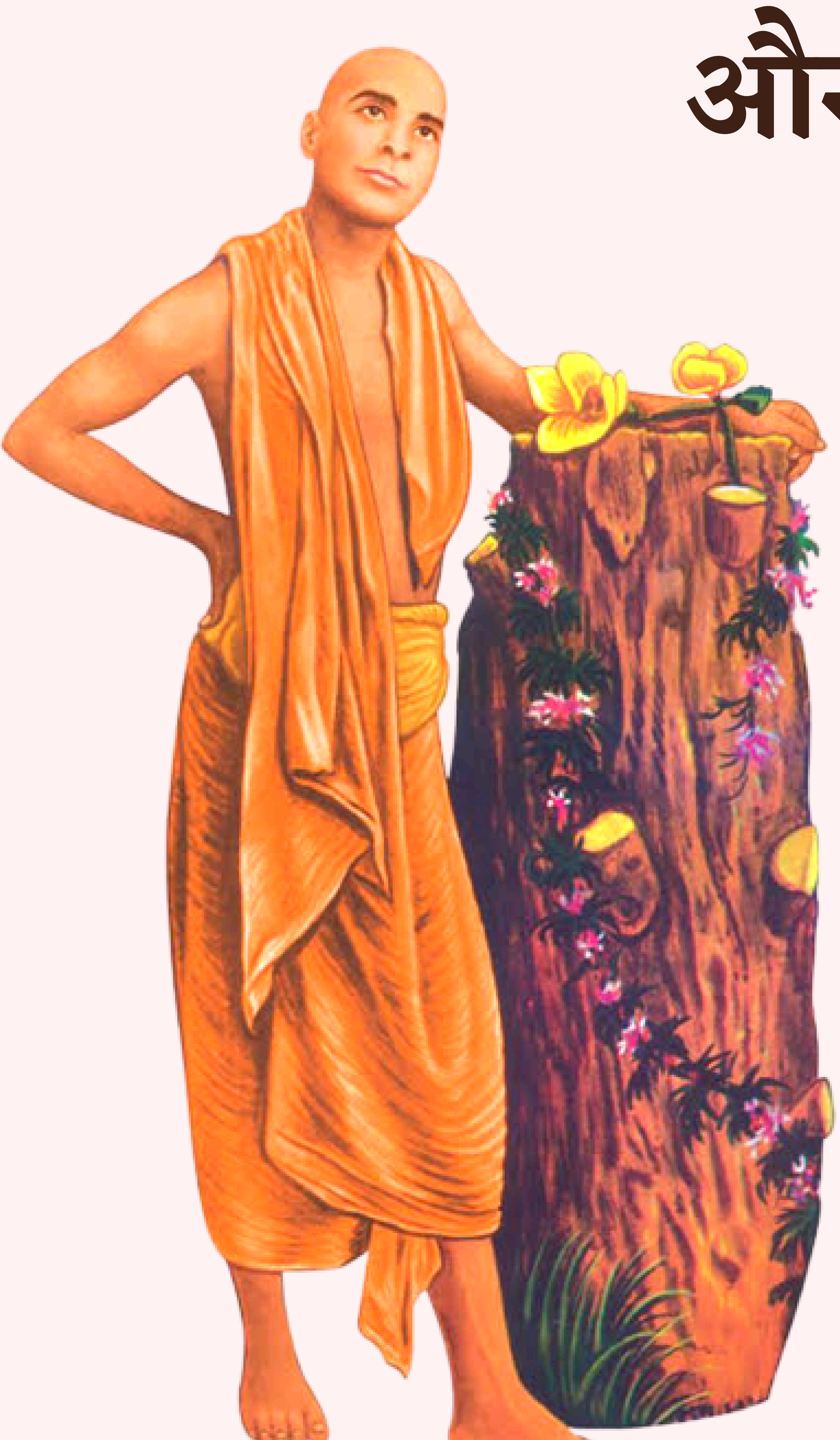

“

आलस्य मृत्यु के समान है, और केवल उद्यम ही आपका जीवन है।

- स्वामी रामतीर्थ

”

शोर ही शोर है

• गिरीश चंद्र शुक्ल

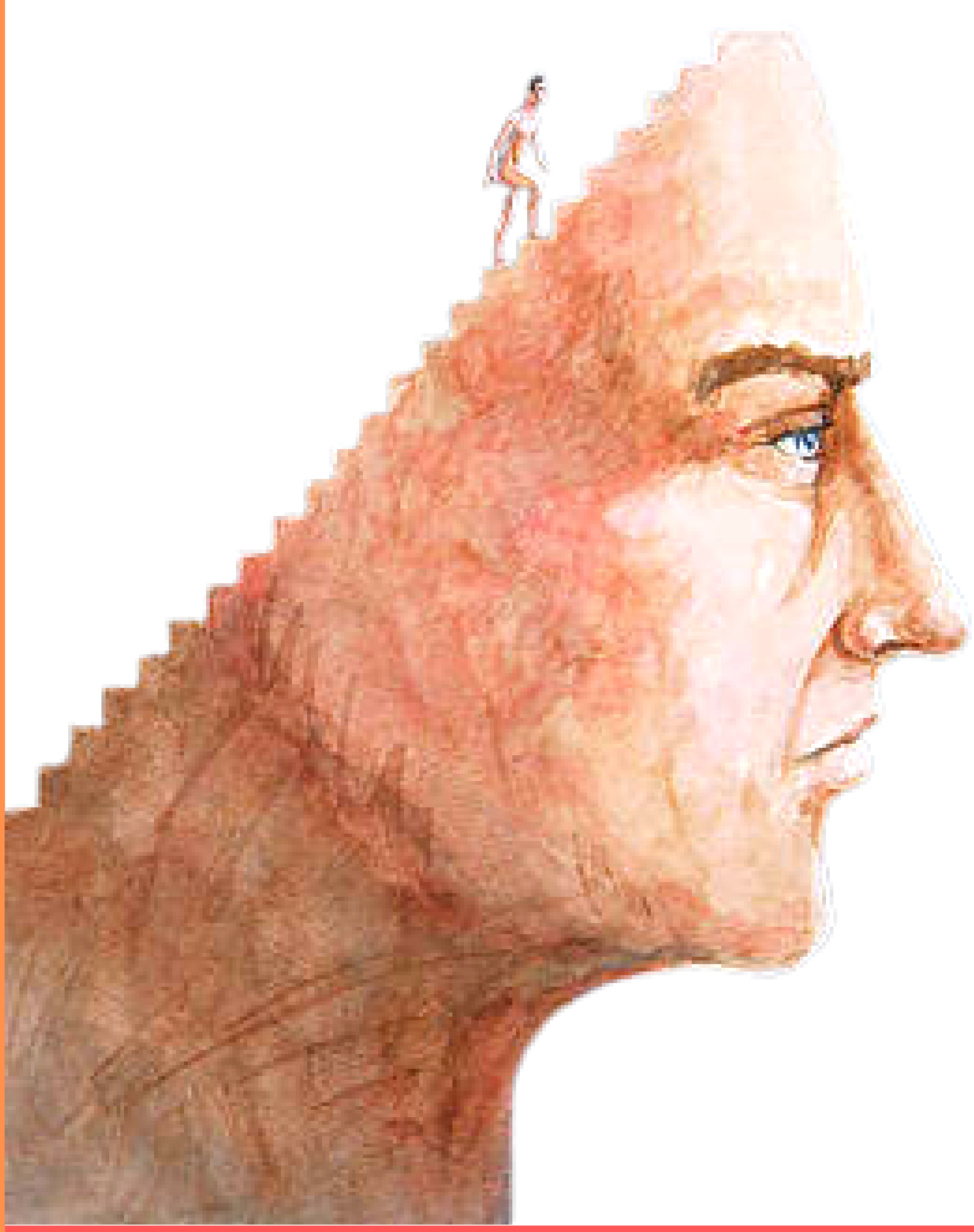

धूप अब नहीं आती
खिड़कियों पर,
वह टकरा कर तिमंजिले
मकान से
वहीं ढेर हो जाती है।
ना ही चहकती है चिड़िया
आंगन में,
एक अदद घोंसले की तलाश
में,
क्योंकि आदमी भूंखा है
इसलिए,
अब वह छत के दाने छोड़
देती है।
ना ही अब हरी घास है
मखमल सी,
हर जगह पक्की है निष्ठुर
आदमी के
ह्रदय की तरह।
सड़क पर मरने को मजबूर
जानवर,
आवारा नहीं थे,
हमने ही छीना है उनका
चरागाह।
लालच में,
विकास की आग में हमने
अपनी सभ्यता,
जला दी।
अब सिर्फ चारो ओर अंधी
दौड़ है,
और शोर ही शोर है।।

❝

जो सज्जनता का अतिक्रमण करता है उसकी आयु, संपत्ति, यश, धर्म, पुण्य, आशीष, श्रेय नष्ट हो जाते हैं

- भगवान महर्षि वेदव्यास

❞

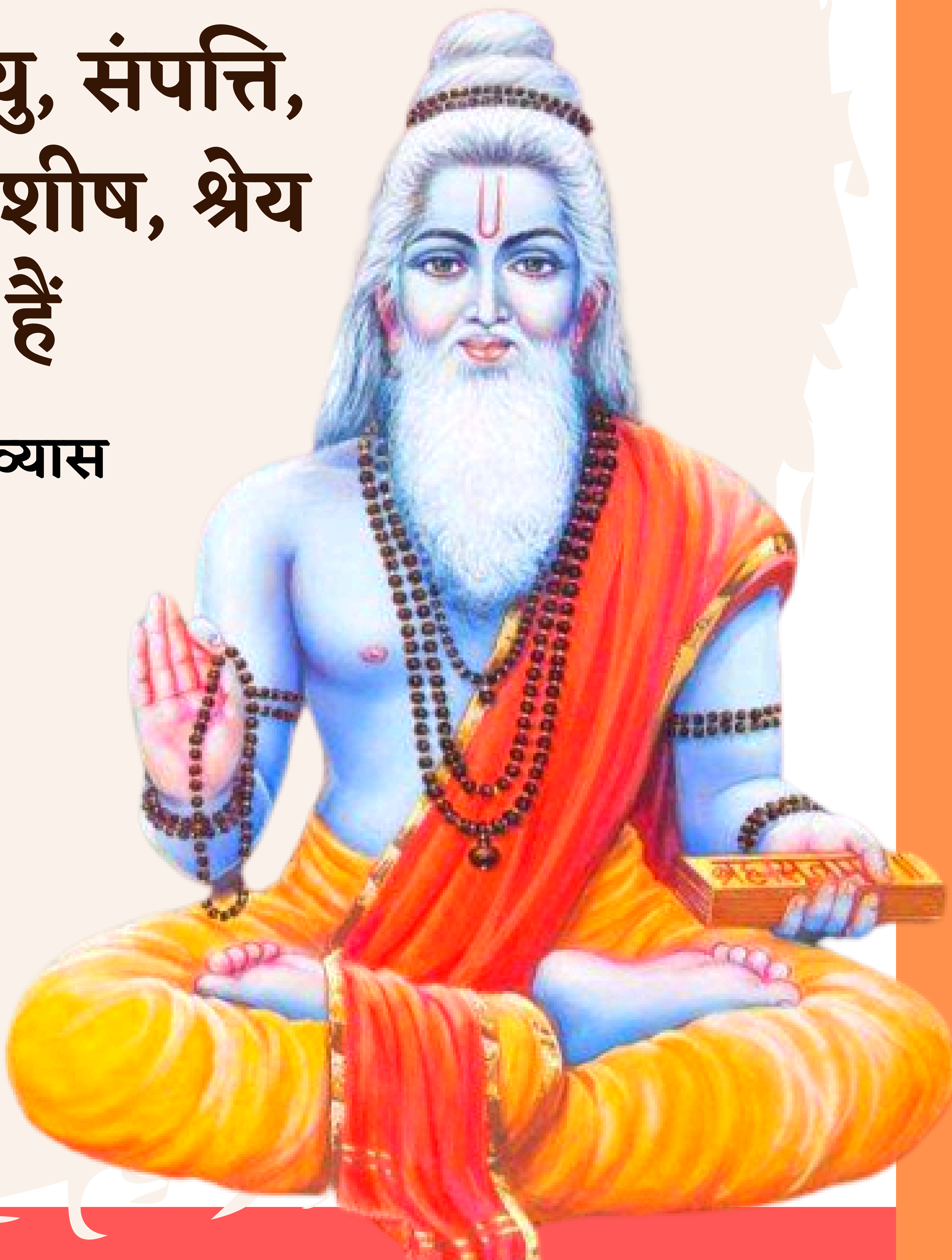

कैशलेस मैरेज

• डॉ. अनिल कुमार तिवारी

गलत मत समझिए, यहाँ बिना किसी दहेज के शादी की बात नहीं हो रही। बात है ऐसी शादी की जो डिमोनिटाइजेशन के तुरंत बाद होनी थी, लेकिन अपरिहार्य कारणों से टालनी पड़ी। और जैसा कि ज़्यादातर होता है, टली हुई शादी गृहछिद्र खुलने के कारण तयशुदा लोगों में या तो होती नहीं या जानबूझकर नासमझी करने पर कोई नई मुसीबत आती ही है। जिस शादी की मैं बात कर रहा हूँ वह इन दोनों से परे है। यहाँ शादी के दोनों पक्षों ने राष्ट्रियता की भावना का प्रदर्शन करते हुये पूरी तरह कैशलेस शादी करने की ठानी।

तो साहब, शादी की तैयारियाँ नए सिरे से शुरू हो गयी। सबसे पहले लेन-देन से जुड़े सभी संबंधियों के जीरो बैलेंस वाले बैंक खाते खुलवाने थे, जीरो बैलेंस लेन-देन में पूरी पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए। होने वाले समधी-समधिन, वर-वधू, ताईयां-ताये, बहनें-बहनोइयों, फूफियों-फूफाओं, मासियों-मौसों, मामियों-मामाओं, पंडित, नाई, कुम्हार, धोबी, बढ़ई, लुहार, सुनार, चुरिहारिन आदि सभी संभावित लाभलेताओं और लाभदाताओं को साफ-साफ बता दिया गया कि बिना खाते के कोई भुगतान संभव नहीं होगा। वर-वधू को एक संयुक्त खाता यानि ज्वाइंट अकाउंट भी खुलवाना था क्योंकि कुछ भुगतान साथ-साथ लेना या करना था। सभी से यह भी अनुरोध किया गया कि वे अपने खातों को पे-टीएम और क्यू-आर कोड के साथ जोड़ लें। हाँ, वर-वधू के खाते में एक लोचा था, वयस्कता के हवाले से एक संरक्षण अनिवार्य था। फिलहाल दौड़-भागकर खाता खुल गया।

कैशलेस शादी ने पंडित जी के सामने एक और दुविधा खड़ी कर दी। नवग्रहों, गौरी, गणेश, पृथ्वी, पंच-लोकपाल और दस-दिग्पाल के लिए जो चढ़ावा आना था उसमें कोई घाल-मेल न हो, इसके लिए अलग-अलग क्यू-आर कोड और खाता जरूरी था। सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु नवग्रहों का आधार कार्ड न होने से खाता खुल नहीं सकता था, मजबूरी में इन सबको पंडित जी के ही खाते से जोड़ने का निश्चय हुआ, हलाँकि इसमें इन्कम टैक्स का खतरा महसूस किया गया। लेकिन पंडित जी तो ठहरे पंडित जी। भारत में आज तक उतनी समस्या ही नहीं हुई जितना पंडितों के पास समाधान। हर ग्रह के लिए क्यू-आर कोड पंडित वाला ही था लेकिन उनका रंग अलग-अलग था, जैसे सूर्य के लिए तूली रंग, चंद्र के लिए हल्का पीला, मंगल के लिए गुलाबी, बुध के लिए हरा, बृहस्पति के लिए पीला, शुक्र के लिए सफ़ेद, शनि के लिए काला, राहु के लिए गेंदा रंग, केतु के भूरा।

बारात के आते ही द्वार-पूजा की तैयारी की गयी। दूल्हे के सिर पर मुकुट था, उसके लिए क्यू-आर कोड सामने की तरफ चिपकाया गया। आचमन के बाद वधू के दादा के हाथ में कुश की पवित्री पहनाई गयी। दूल्हे को पत्तल के आसान पर पूर्व की तरफ मुंह करके बैठाया गया। दादा ने हाथ में पवित्र चावल लेकर दूल्हे के ऊपर छिड़का। उसके बाद वर के हाथ में अक्षत दिया... हरि ॐ, हरि ॐ, हरि ॐ तत्सत् विष्णुम् विष्णुम् विष्णुम् श्रीश्वेत वाराह कल्पे बैवस्वत मन्वंतरे...द्रव्य दक्षिणाम् तुभ्याहम् संप्रददेत, दोनों अपने पे-टीएम एप्स से क्यू-आर कोड स्कैन करके हाथ से ढककर पिन कोड और बिना किसी को दिखाये। इसके बाद नवग्रहों का स्नान-ध्यान करके दक्षिणा दी जानी है। कलश पर सभी देवताओं को स्थापित किया गया है, द्रव्य दक्षिणाम समर्पयामि कलशाधिष्ठित देवताय नमः।

इसके बाद गणेश जी की दक्षिणा...लक्ष्मी, पार्वती सरस्वती तीन बार गौरीभ्योः नमः। नवग्रह ॐ ब्रह्मा मुरारि त्रिपुरांतकारी भानुः शशिः भौम सुतो बुधश्च गुरुश्च शुक्रो शनि राहु केतवे सर्वे ग्रहाय द्रव्य दक्षिणाम समर्पयामि। इसके बाद दादा वर की अर्चना वंदना करते हैं। आरती के पैसे को वर पाएगा। ब्राह्मणों को दक्षिणा वर और दादा दोनों के द्वारा, नमो ब्राह्मण देवाय गो ब्राह्मण हिताय च, जगत हिताय कृष्णाय गोविंदाय नमो नमः, सात ब्राह्मणों को दक्षिणा...ब्राह्मण वरणाय द्रव्य दक्षिणाम संप्रददेत। वधू के भाई और वर के बीच बीरा-बदलाई की रस्म में... अब पंडित और नाई को उनका दक्षिणा।

अभिषेक मंत्र से सबके मंगल की कामना करेंगे। अंत में वर के मस्तक और कंठ में विभूति...देवताओं का विसर्जन... यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम, इष्ट काम समृद्ध्यर्थम पुनरागमनाय च। अच्छा ये रीति-रिवाज़ जहाँ हो रहे थे वह एक बहुत ही पिछड़ा इलाक़ा था। ऑनलाइन भुगतान पर सरकार की नज़र होती ही है। इस इलाके में छोटे-छोटे अमाउण्ट के इतने भुगतान देखकर दूरसंचार विभाग को अंदेशा हुआ कि कोई घपला तो नहीं हो रहा। संबन्धित थाना प्रभारी (एसएचओ) को खबर मिली तो वे पूरा लाव-लश्कर लेकर हूटर बजाते हुये गाँव में दाखिल हुये। साइरन सुनते ही शादी में भीड़ का फायदा उठाकर जो जेब साफ करने वाले थे वे दीवाल फांदकर तुरंत भाग खड़े हुये। पहुँचते ही दारोगा कड़क आवाज में बोला, क्या हो रहा है? साहब शादी, किसी ने धीमी आवाज में कहा। दारोगा फिर गरजे, दूल्हा कहाँ है? लोगों ने दूल्हे की ओर इशारा किया। दारोगा बोला, मसखरी कर रहे हो, वहाँ तो केवल मौर (सेहरा) रखा है। फिर ठिठकर देख कि उसमें कुछ हलचल हो रही है। पास जाकर देखा, एक पाँच साल का बच्चा सेहरे में पूरा ढका था। दारोगा का माथा ठनका, परंतु आँखों में चमक आ गयी। बाल-विवाह...सब चलो थाने में। दोनों समधी जो एक दूसरे की आवभगत में लगे थे, अचानक दारोगा के पैरों पर गिर पड़े। साहब, कुछ रहम करो, हमारी इज्ज़त चली जाएगी। और फिर इज्ज़त के बदले भुगतान हुआ, वह भी पूरा कैश।

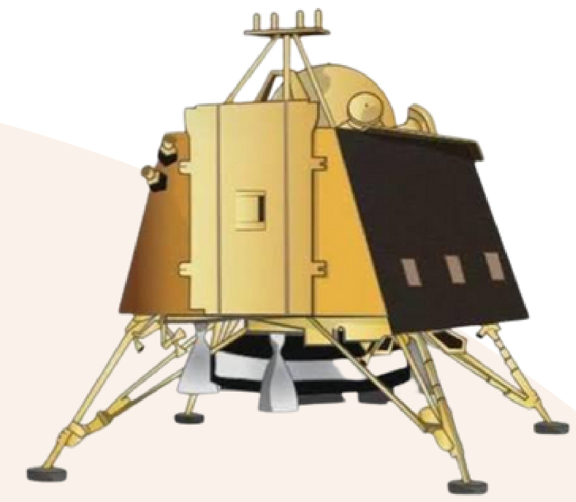

.... पांच क्षमताएं हैं जो आर्थिक विकास और राष्ट्र निर्माण के लिए सबसे आवश्यक हैं और यदि हम अपने छात्रों में इन पांच क्षमताओं का विकास करते हैं तो हम एक खास तरह के शिक्षार्थी पैदा करेंगे। अनुसंधान के लिए क्षमता, रचनात्मकता और नवाचार की क्षमता, उच्च प्रौद्योगिकी का उपयोग करने की क्षमता, उद्यमी नेतृत्व की क्षमता और नैतिक नेतृत्व की क्षमता जैसी पांच विशेषताओं का संयोजन एक प्रबुद्ध नागरिक के विकास का परिणाम होगा। मुझे उम्मीद है कि एसएमवीडीयू के छात्र इन विशेषताओं को आत्मसात करेंगे और देश के उत्पादक और गौरवान्वित नागरिक बनेंगे..."

- डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम

(श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय को राष्ट्र को समर्पित करते वक्त दिए गए वक्तव्य के अंश)

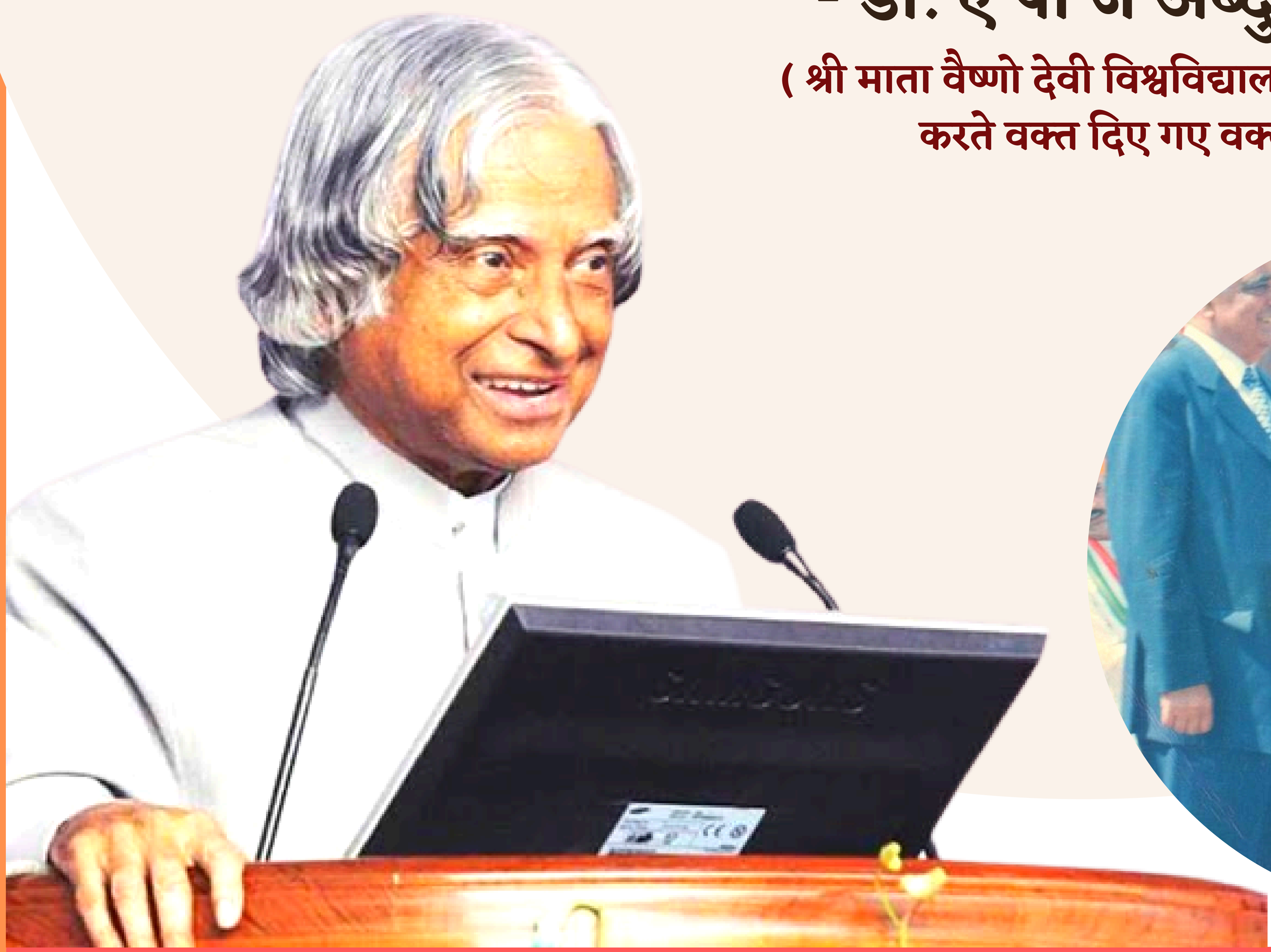

विश्व के ज्ञान मंदिर भारत के प्राचीन विश्वविद्यालय

प्राचीन काल से ही भारत शिक्षा का प्रमुख केंद्र रहा है. उस दौर से ही हमारे देश में शिक्षा का काफी महत्व रहा है। प्राचीन काल से ही भारत के नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालय विश्व विख्यात रहे हैं। इन विश्वविद्यालयों में भारत के ही नहीं, बल्कि देश विदेश के छात्र भी अध्ययन करने आया करते थे:

• तक्षशिला विश्वविद्यालय

तक्षशिला प्राचीन भारत में गांधार देश की राजधानी और शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था, तक्षशिला विश्वविद्यालय विश्व का प्राचीनतम विश्वविद्यालय था। विश्वविद्यालय हिन्दू एवं बौद्ध दोनों के लिये महत्त्व का केन्द्र हुआ करता था। महान राजनीतिज्ञ, विद्वान व नीतिज्ञ चाणक्य यहां पर आचार्य हुआ करते थे. 405 ईसवी में फ़ाह्यान यहां आये थे. वर्तमान समय में तक्षशिला पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त के रावलपिण्डी ज़िले की एक तहसील व महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है, जो रावलपिंडी से लगभग 32 किमी उत्तर-पूर्व में स्थित है।

तक्षशिला विश्वविद्यालय का निर्माण लगभग 2700 वर्ष पहले किया गया था। आज यह विश्वविद्यालय पाकिस्तान में है लेकिन, भारत के बंटवारे से पहले यह भारत के सबसे पुराने विश्वविद्यालयों में से एक था। इस विश्वविद्यालय में विश्व के अलग-अलग कोने से विद्यार्थी पढ़ने आते थे। यहां कई देशों के राजकुमार भी पढ़ने आते थे। अपने समय में यह विश्व शिक्षा का प्रमुख केंद्र था। इसकी प्राचीन दीवारें आज भी मौजूद हैं। तक्षशिला में दस हज़ार छात्रों के आवास व पढ़ाई की सुविधाएँ थीं। शिक्षकों की संख्या का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। विश्वविद्यालय में आवास कक्ष, पढ़ाई के लिए कक्ष, सभागृह और पुस्तकालय थे। उस समय विश्वविद्यालय कई विषयों के पाठ्यक्रम उपलब्ध करता था, जैसे-भाषाएं, व्याकरण, दर्शन शास्त्र, चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, कृषि, भूविज्ञान, ज्योतिष, खगोल शास्त्र, ज्ञान-विज्ञान, समाज-शास्त्र, धर्म, तंत्र शास्त्र, मनोविज्ञान तथा योगविद्या आदि।विभिन्न विषयों पर शोध का भी प्रावधान था। शिक्षा की अवधि 8 वर्ष तक की होती थी। विशेष अध्ययन के अतिरिक्त वेद, तीरंदाजी, घुड़सवारी, हाथी का संधान व एक दर्जन से अधिक कलाओं की शिक्षा दी जाती थी।

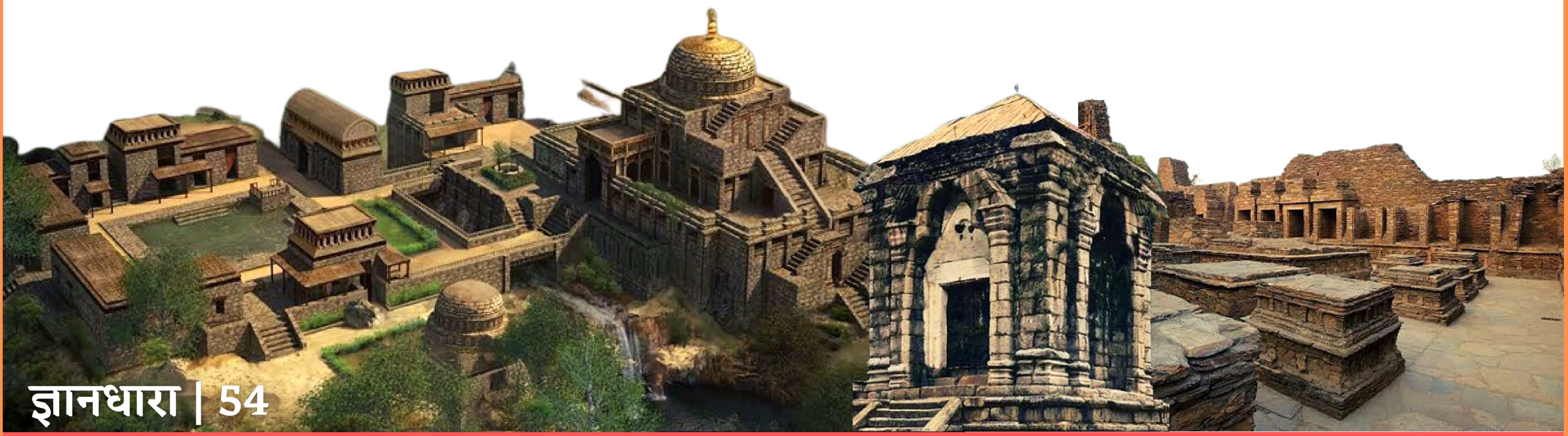

• नालंदा विश्वविद्यालय

भारत के बिहार राज्य में स्थित नालंदा को तक्षशिला के बाद सबसे प्राचीन और सबसे बड़े विश्वविद्यालय के तौर पर जाना जाता है। यह विश्वविद्यालय किस कालखंड में बना इसका अभाव है परंतु प्रसिद्ध कथानक के अनुसार विश्वविद्यालय का निर्माण 450-470 ई. के दौरान उस समय के गुप्त वंश के शासक सम्राट कुमारगुप्त ने किया था। इस विश्वविद्यालय में उस समय केवल भारत के ही नहीं बल्कि, चीन, जापान, तिब्बत, कोरिया, इंडोनेशिया और तुर्की जैसे कई बड़े देशों से छात्र-छात्राएं पढ़ने के लिए आते थे।

इस विश्वविद्यालय के बारे में ऐसा भी कहा जाता है कि उस समय इस विश्वविद्यालय में कम से कम 300 से अधिक क्लास रूम थे, जहां पर करीब 10 हजार छात्र एक साथ पढ़ते थे। यहां के टीचर्स व छात्रों के लिए 9 मंजिल की एक बहुत बड़ी लाइब्रेरी भी थी। यहां पर प्रवेश लेना बहुत मुश्किल माना जाता था, दाखिले के लिए छात्रों को प्रवेश परीक्षा पास करना जरूरी था।

• विक्रमशिला विश्वविद्यालय

बिहार के भागलपुर ज़िले में स्थित विक्रमशिला विश्वविद्यालय एक ज़माने में भारत का प्रसिद्ध शिक्षा-केन्द्र हुआ करता था। इसकी स्थापना 8वीं शताब्दी में पाल राजा धर्मपाल ने की थी। प्रसिद्ध पण्डित अतीश दीपंकर ने यहीं से शिक्षा हासिल की थी। इस विश्वविद्यालय ने अपनी स्थापना के तुरन्त बाद ही अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व प्राप्त कर लिया था. विक्रमशिला विश्वविद्यालय के प्रख्यात विद्वानों की एक लम्बी सूची है।

विक्रमशिला में छह द्वार थे। द्वार की संख्या छह होने का तात्पर्य है कि यहाँ पर छह विषयों की पढ़ाई होती थी जिनमें केवल तंत्र विद्या ही नहीं बल्कि भौतिकी,रसायन विज्ञान, धर्म, संस्कृति आदि शामिल थे। विक्रमशिला विश्वविद्यालय में लगभग दस हज़ार विद्यार्थियों की पढ़ाई होती थी और उनके लिए क़रीब एक सौ आचार्य पढ़ाने का काम करते थे। गौतम बुद्ध स्वयं यहाँ आए थे और यही से गंगा नदी पार कर सहरसा की ओर गए थे।

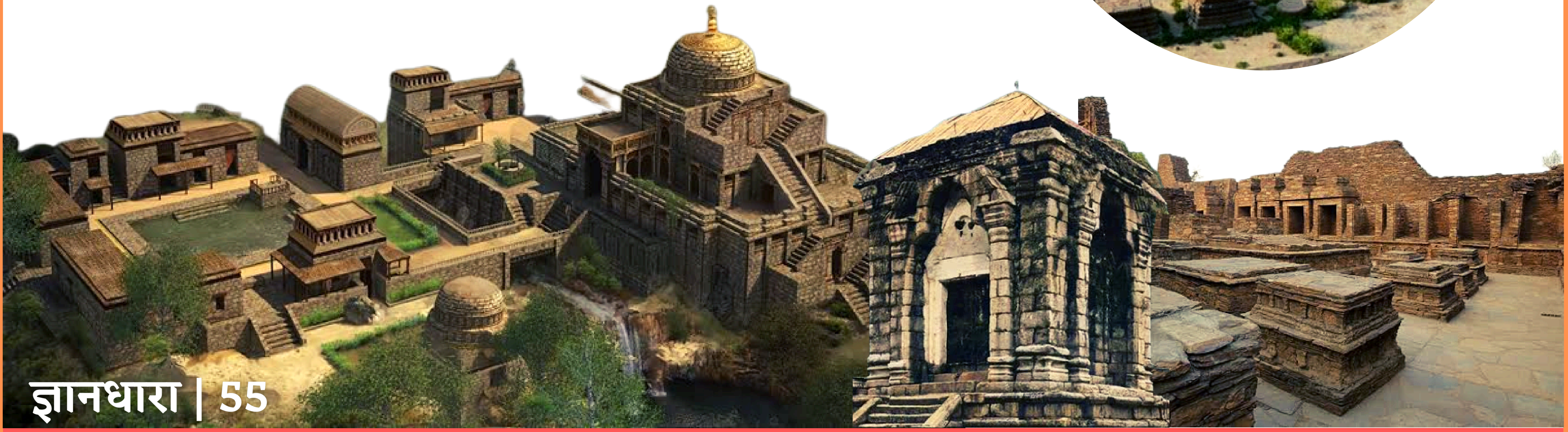

• शारदा पीठ विश्वविद्यालय

यह मंदिर विद्या की देवी सरस्वती को समर्पित है। एक समय था जब शारदा पीठ भारतीय उपमहाद्वीप में सर्वश्रेष्ठ मंदिर विश्वविद्यालयों में से एक हुआ करता था। कहा जाता है की अद्वैत वेदान के वेदांत के प्रवर्तक जगद्गुरु आदि शंकराचार्य और वैष्णव संप्रदाय के प्रवर्तक श्री रामानुजाचार्य दोनों ही यहां पर आए थे और दोनों ने यहां महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की। शंकराचार्य ने यहां सर्वज्ञ पीठ पर बैठ और रामानुजाचार्य ने यही पर श्रीविद्या का भाष्य प्रवर्तित किया।उस समय माँ शारदा के उस मंदिर के चार द्वार थे जो चारों दिशाओं में खुलते थे। पूर्व, पश्चिम और उत्तर दिशा से आए विद्वानों के लिए तीन द्वार खुल चुके थे किंतु दक्षिण दिशा की ओर से कोई विद्वान आया नहीं था इसलिए वह द्वार बंद था। आदि शंकर ने जब यह सुना तो वे शारदा मंदिर के सर्वज्ञ पीठ के दक्षिणी द्वार के लिए निकल पड़े।

शंकर जब कश्मीर पहुँचे तब वहाँ उन्हें अनेक विद्वानों ने घेर लिया। उन विद्वानों में न्याय दर्शन, सांख्य दर्शन, बौद्ध एवं जैनी मतावलंबी समेत कई विषयों के ज्ञाता थे। शंकर ने सभी को अपनी तर्कशक्ति और मेधा से परास्त किया तत्पश्चात मंदिर का दक्षिणी द्वार खुला और आदि शंकर पद्मपाद का हाथ पकड़े हुए सर्वज्ञ पीठ की ओर बढ़ चले। तभी माँ सरस्वती ने शंकर की परीक्षा लेने के लिए उनसे कहा, “तुम अपवित्र हो। एक सन्यासी होकर भी काम विद्या सीखने के लिए तुमने एक स्त्री संग संभोग किया था। इसलिए तुम सर्वज्ञ पीठ पर नहीं बैठ सकते।”

तब शंकर ने कहा, “माँ मैंने जन्म से लेकर आजतक इस शरीर द्वारा कोई पाप नहीं किया। दूसरे शरीर द्वारा किए गए कर्मों का प्रभाव मेरे इस शरीर नहीं पड़ता।” यह सुनकर माँ शारदा शांत हो गईं और आदि शंकर सर्वज्ञ पीठ पर विराजमान हुए। माँ सरस्वती का आशीर्वाद प्राप्त कर शंकर की कीर्ति चहुँओर फैली और वे शंकराचार्य कहलाए। आदि शंकराचार्य ने माँ सरस्वती की वंदना में स्तुति की रचना की जो आज प्रत्येक छात्र की वाणी को अलंकृत करती है- “नमस्ते शारदे देवि काश्मीरपुर वासिनी, त्वामहं प्रार्थये नित्यं विद्यादानं च देहि मे।”

वाराणसी से स्नातक के उपरांत उच्च शिक्षा के लिए शारदा पीठ विश्वविद्यालय आते थे व अनेक विषयों में शिक्षा ग्रहण करते थे।

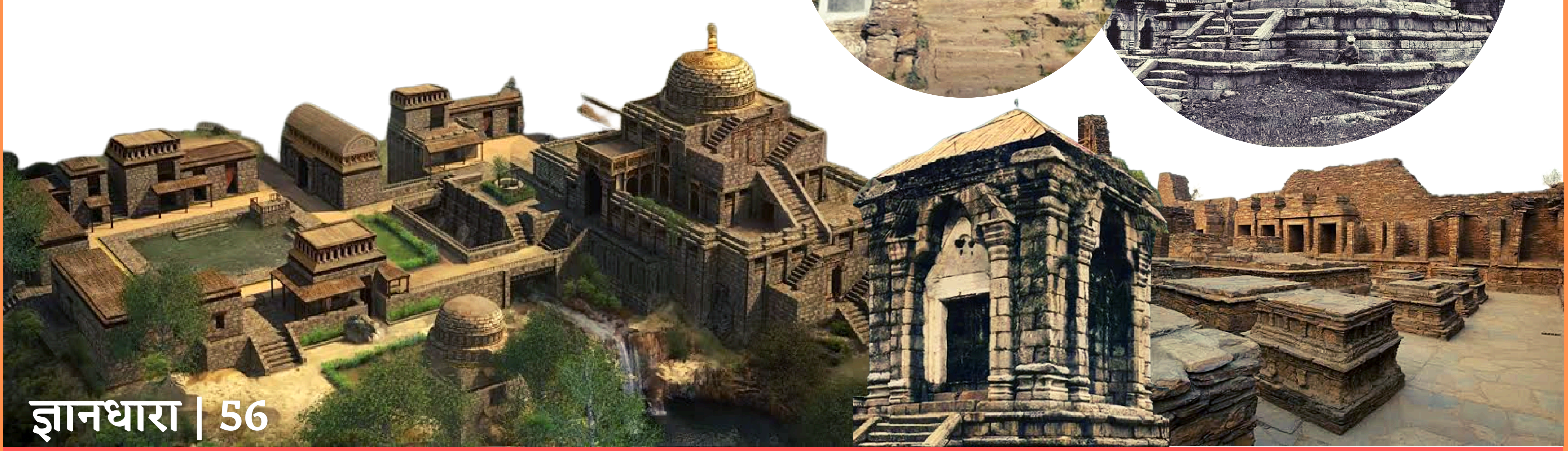

• पुष्पगिरी विश्वविद्यालय

वर्तमान भारत के उड़ीसा राज्य में स्थित था. इसकी स्थापना तीसरी शताब्दी में कलिंग राजाओं ने की थी। अगले 800 साल तक यानी 11वीं शताब्दी तक ये विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए विश्व विख्यात रहा। इस विश्वविद्यालय का परिसर तीन पहाड़ों ललित गिरी, रत्न गिरी और उदयगिरी तक फैला हुआ था।

• तेल्हाड़ा विश्वविद्यालय

नालंदा ज़िले के तेल्हाड़ा में मिले तेल्हाड़ा विश्वविद्यालय के अवशेष से पता चला है कि ये नालंदा और विक्रमशिला विश्वविद्यालय से भी 300 साल पुराना था. तेल्हाड़ा विश्वविद्यालय की स्थापना कुषाण काल जबकि नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना गुप्त काल में हुई थी। इसका भी विध्वंस नालंदा विश्वविद्यालय का विध्वंस करने वाले आक्रांता बख्तियार खिलजी ने की थी। यह विश्वविद्यालय विश्व प्रसिद्ध था, देश-विदेश से विद्यार्थी विद्या अध्ययन हेतु आते थे।

• ओदंतपुर विश्वविद्यालय

ओदंतपुर प्राचीन काल में प्रमुख ऐतिहासिक स्थल हुआ करता था। ओदंतपुर विश्वविद्यालय भी नालंदा और विक्रमशिला विश्वविद्यालय की तरह विख्यात हुआ करता था। लेकिन ओदंतपुर विश्वविद्यालय आज भी धरती के गर्भ में दबा है, जिसके कारण बहुत ही कम लोग इस विश्वविद्यालय के इतिहास से परिचित हैं। यह स्थान बिहार राज्य में स्थित है।

ऐसे महान विश्वविद्यालय ही भारत की महान ज्ञान व विज्ञान परंपरा के वाहक विश्व मे रहे हैं। इन विश्वविद्यालय के अलावा भी भारत मे कई विशाल शिक्षा के केंद्र थे जो विश्व प्रसिद्ध थे व धर्म कल्याण को समर्पित थे। जहां विज्ञान, ज्योतिष, गणित, खगोल आदि विषयों में शोध होते थे व देश-विदेश के छात्र शिक्षा ग्रहण कर पारंगत होकर निकलते थे।

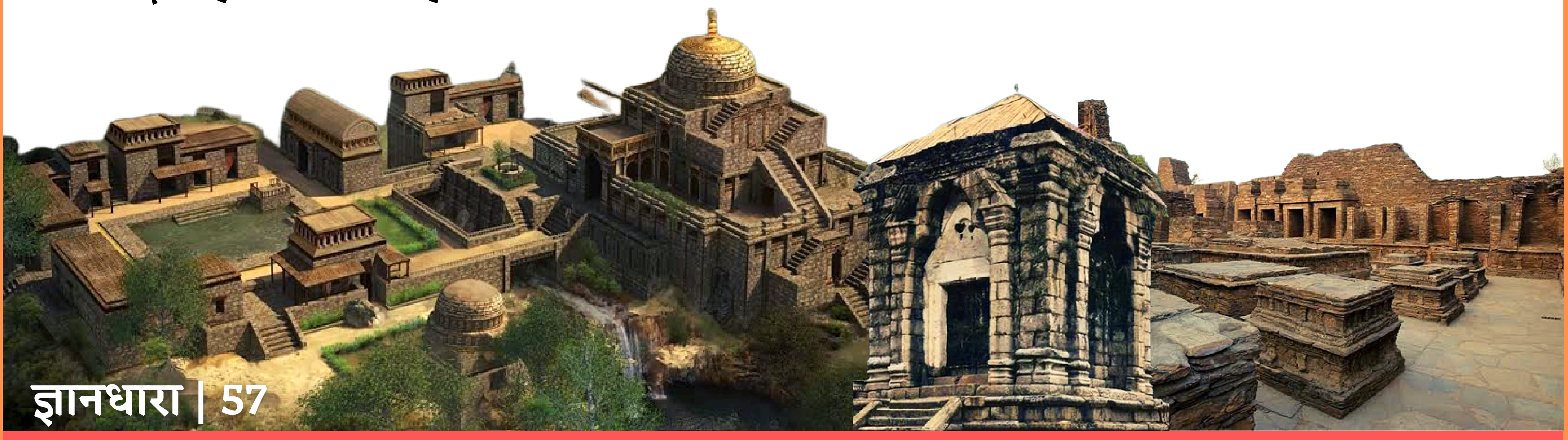

धन्यवाद!!

सर्वप्रथम ज्ञानदाता श्री गणेश व माँ शारदे को प्रणाम,माँ वैष्णो देवी के श्री चरणों मे स्थित श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय (कटड़ा,जम्मू-कश्मीर) की ज्ञानधारा पत्रिका का शरद अंक हम प्रकाशित कर रहे हैं,यह अंक भारत की महान ऋषि व सन्यास परंपरा को समर्पित है।भारत की महानता यहां अवतरित दिव्य ऋषियों व सन्यासियों से ही गौरवांवित होती रही है,जिन्होंने भीषण संघर्षों में भी राष्ट्र,धर्म व संस्कृति को यथावत रखा।आगामी हिन्दू नव वर्ष के उपलक्ष्य में इसमें विशेष जानकारी अंकित की गई है,जो सांस्कृतिक पुनरोत्थान में सहायक साबित होगी।इस अंक में महान रचनाकारों व विद्यार्थियों के लेख व कविता,कला व ज्ञान से ओतप्रोत क्रियाकलाप शामिल किए गए हैं।

यह केवल एक प्रकाशन तक सीमित पत्रिका नही बल्कि राष्ट्र व सांस्कृतिक जागरण का भी कार्य करेगी।इस अर्द्धवार्षिक पत्रिका भारत के गौरवपूर्ण अतीत के विषय मे जानने को मिलेगा,जो प्रेरणापुंज का कार्य करेगा।

आशा है यह पत्रिका साहित्यिक जगत में ज्ञान का सूर्य बन कर प्रकाशित होती रहेगी व पाठकों का सहयोग हमें मिलेगा जिससे हम इस पत्रिका का प्रकाशन सफलतापूर्वक करते रहेंगे।

पत्रिका का पाठन कर आनंद का अनुभव करें।

हिन्दू नववर्ष की शुभकामनाओं सहित!

- मिलिन्द शुक्ल

जितेन्द्रिय पुरूष के मन में विघ्न कर वस्तुएँ थोड़ा भी क्षोभ उत्पन्न नहीं कर सकतीं।

- महाकवि कालिदास

स्वतंत्रता यज्ञ के नायक महर्षि दयानंद

1857 का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम न केवल भारत के राष्ट्रीय इतिहास के लिए अपितु आर्य समाज जैसी क्रांतिकारी संस्था के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण वर्ष है । इस समय भारत के उस समय के चार सुप्रसिद्ध संन्यासी देश में नई क्रांति का सूत्रपात कर रहे थे। इनमें से स्वामी आत्मानंद जी की अवस्था उस समय 160 वर्ष थी। जबकि स्वामी आत्मानंद जी के शिष्य स्वामी पूर्णानंद जी की अवस्था 110 वर्ष थी। उनके शिष्य स्वामी विरजानंद जी उस समय 79 वर्ष के थे तो महर्षि दयानंद की अवस्था उस समय 33 वर्ष थी।

बहुत कम लोग जानते हैं कि इन्हीं चारों संन्यासियों ने 1857 की क्रांति के लिए कमल का फूल और चपाती बांटने की व्यवस्था की थी । कमल का फूल बांटने का अर्थ था कि जैसे कीचड़ में कमल का फूल अपने आपको कीचड़ से अलग रखने में सफल होता है, वैसे ही हमें संसार में रहना चाहिए अर्थात् हम गुलामी के कीचड़ में रहकर भी स्वाधीनता की अनुभूति करें और अपने आपको इस पवित्र कार्य के लिए समर्पित कर दें। गुलामी की पीड़ा को अपनी आत्मा पर न पड़ने दें बल्कि उसे एक स्वतंत्र सत्ता स्वीकार कर स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए साधना में लगा दें।

इसी प्रकार चपाती बांटने का अर्थ था कि जैसे रोटी व्यवहार में और संकट में पहले दूसरे को ही खिलाई जाती है , वैसे ही अपने इस जीवन को हम दूसरों के लिए समर्पित कर दें । हमारा जीवन दूसरों के लिए समर्पित हो जाए , राष्ट्र के लिए समर्पित हो जाए, लोगों की स्वाधीनता के लिए समर्पित हो जाए। ऐसा हमारा व्यवहार बन जाए और इस व्यवहार को अर्थात यज्ञीय कार्य को अपने जीवन का श्रृंगार बना लें कि जो भी कुछ हमारे पास है वह राष्ट्र के लिए है, समाज के लिए है, जन कल्याण के लिए है।

महर्षि दयानंद स्वराज्य व स्वदेशी के प्रथम व प्रबल उद्घोषक भी थे। अपने भारतभ्रमण के दौरान देशवासियों की दुर्दशा देख कर महर्षि इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि पराधीन अवस्था में धर्म और देश की रक्षा करना कठिन होगा,अंगेजों की हुकूमत होने पर भी महर्षि ने निडर होकर उस समय जो कहा था, वह आज भी सत्यार्थप्रकाश में उपलब्ध है।

उन्होंने कहा था,"चाहे कोई कितना ही करे, किन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। किन्तु विदेशियों का राज्य कितना ही मतमतान्तर के आग्रह से शून्य, न्याययुक्त तथा माता-पिता के समान दया तथा कृपायुक्त ही क्यों न हो, कदापि श्रेयस्कर नहीं हो सकता।"

1857 से लेकर 1859 तक महर्षि दयानंद ने भूमिगत रहकर देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में विशेष योगदान दिया। इसके बाद 1860 में सार्वजनिक मंच पर दिखाई पड़े।महर्षि दयानंद सन् 1855 हरिद्वार में वह नीलपर्वत के चंडी मंदिर के एक कमरे में रुके हुए थे, उनको सूचित किया गया कि कुछ लोग आपसे मिलने और मार्ग दर्शन हेतु आना चाहते हैं, वास्तव में लोग क्रांतिकारी थे, उनके नाम थे — धुंधूपंत-नाना साहब पेशवा (बालाजी राव के दत्तक पुत्र), बाला साहब, अजीमुल्लाह खान, तात्या टोपे, जगदीश पुर के राजा कुंवर सिंह। इन लोगों ने महर्षि के साथ देश को अंग्रेजों से आजाद करने के बारे में मंत्रणा की और उनको मार्ग दर्शन करने का अनुरोध किया व निर्देशन लेकर यह अपने अपने क्षेत्र में जाकर क्रांति की तैयारी में लग गए।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस के शब्दों में "आधुनिक भारत के आदि निर्मता तो दयानंद ही थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती उन महापुरूषों में से थे जिन्होनें स्वराज्य की प्रथम घोषणा करते हुए,आधुनिक भारत का निर्माण किया। हिन्दू समाज का उद्धार करने में आर्यसमाज का बहुत बड़ा हाथ है।",वीर सावरकर के शब्दों में "महर्षि दयानंद स्वाधीनता संग्राम के सर्वप्रथम योद्धा थे।"

महर्षि दयानंद के द्वारा स्वतंत्रता की लौ प्रज्ज्वलित करने का एक सार्थक प्रयास था उसी के कारण भारतवर्ष की स्वतंत्रता के लिए लाखों वीरों, वीरांगनाओं ने अपने प्राण आहूत कर दिए। बाल गंगाधर, लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, सरदार भगत सिंह, लाला लाजपत राय, विजय सिंह पथिक, राव कदम सिंह, राव उमराव सिंह, शहीद धन सिंह कोतवाल अनेक आजादी के दीवाने महर्षि दयानंद की प्रेरणा के आधार पर ही भारत माता की बलिवेदी पर हंसते हंसते अपना सर्वोच्च बलिदान कर गए।

"

एक धर्म, एक भाव और
एक लक्ष्य बनाए बिना भारत
का पूर्ण हित और उन्नति
असंभव है।

- महर्षि दयानंद सरस्वती

"

हृदय

• डॉ. अमिताभ विक्रम द्विवेदी

मनोगत कक्ष
स्पंदित वक्ष
चंचल मन
उत्तेजित तन।

रक्त उफान
ये कैसा भान
जमीं आसमान
सुनते ये तान
हम विद्यमान।

अलग थलग
प्रच्छन्न प्रमोद
गुमसुम ज्ञान
विदित प्रेम स्रोत।

विश्वविद्यालय परिसर में दो दिवसीय 25 वीं राष्ट्रीय ई गवर्नेंस कॉन्फ्रेंस सम्पन्न हुई।

हिंदी पखवाड़ा का आयोजन व पुरस्कार वितरण कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

बायोसाइंसेस एंड केमिकल टेक्नोलॉजी 2022 में उभरते रुझानों पर तीन दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन हुआ।

धन का इस्तेमाल हमेशा किसी की मदद के लिए ही करना चाहिए। अमीर होने का मतलब धन इकट्ठा करते जाने से नहीं, बल्कि इस धन को सही जगह खर्च करने से भी होता है।

- बाबा नीम करौली महाराज

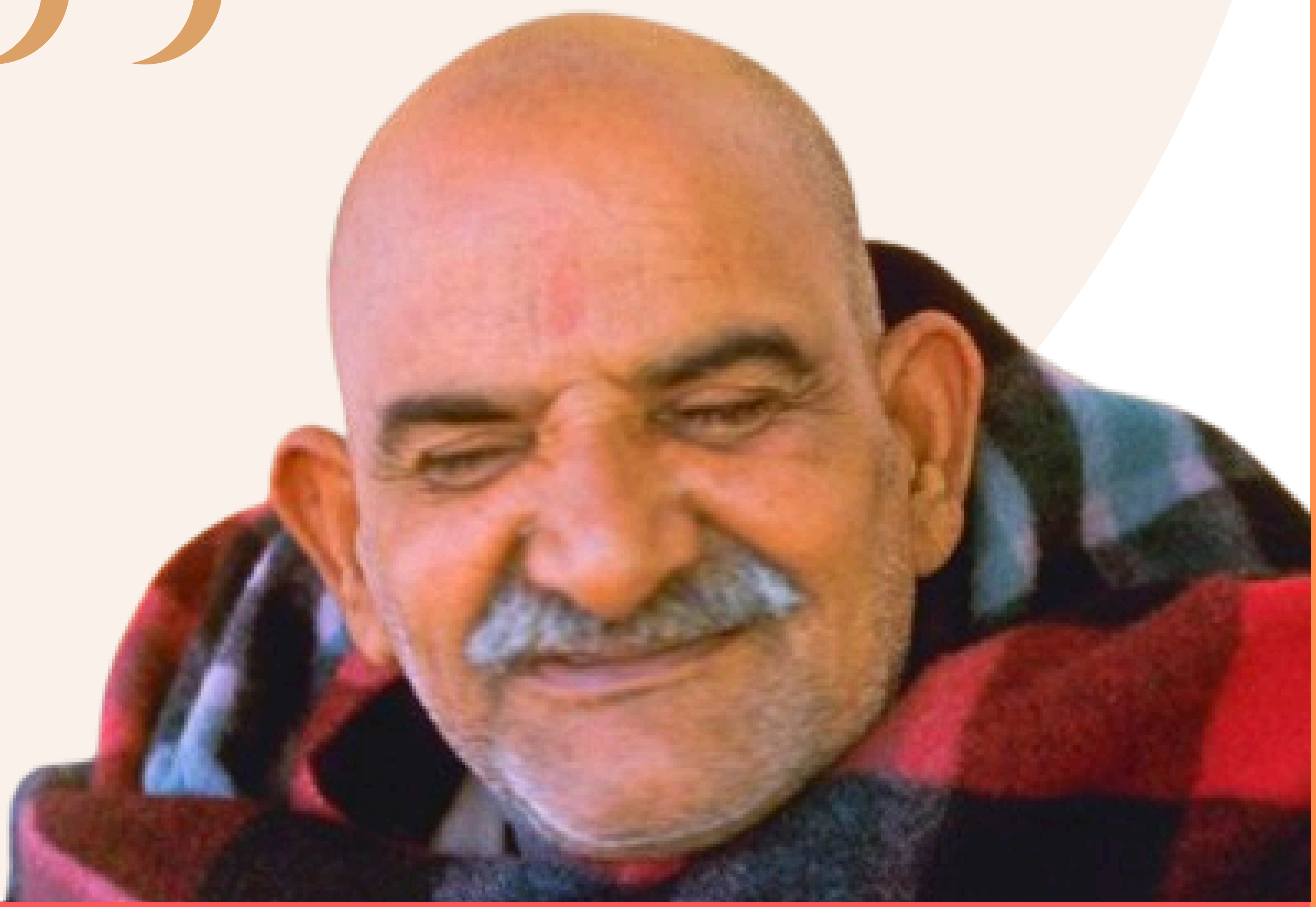

विज्ञानं ब्रह्म

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय

[विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) अधिनियम 1956 की धारा 2 (एफ) और 12 (बी) के तहत]

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय (एसएमवीडीयू) की स्थापना जम्मू और कश्मीर श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय अधिनियम 1999 के तहत की गई है। यह पूरी तरह से आवासीय विश्वविद्यालय है। इसका उद्घाटन 19 अगस्त 2004 को भारत के तत्कालीन माननीय राष्ट्रपति डॉ० ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के करकमलों से हुआ। डॉ० कलाम ने विश्वविद्यालय के छात्रों को पहला व्याख्यान भी दिया। इस विश्वविद्यालय में अभियांत्रिकी, विज्ञान, प्रबंधन, परिचर्या और मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय हैं। इसके 15 विभागों में बी.टेक., बी.आर्क., एम.टेक., बी.एससी., एम.एससी., बी.ए., एमए और पीएच.डी. स्तर पर पढ़ाई होती है।

----आधारभूत मूल्य----

- शैक्षणिक सत्यनिष्ठा और उत्तरदायित्व
- प्रत्येक व्यक्ति के विचारों का सम्मान और सहिष्णुता
- राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रासंगिकता वाले विषयों पर ध्यान देना
- बौद्धिक उत्कृष्टता और रचनात्मकता की सराहना
- वैज्ञानिक अन्वेषण की निरंतरता

परिसर कर्यालय:

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय
उपडाकघर, कटड़ा
जम्मू और कश्मीर केंद्र शासित प्रदेश-182320
ईमेल: info@smvdu.ac.in
फैक्स: 01991-285694

जनसंपर्क कर्यालय:

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय
सरस्वती धाम,रेल प्रमुख परिसर,जम्मू
जम्मू और कश्मीर केंद्र शासित प्रदेश-182320
संपर्क नंबर: 9622885588
फोन/फैक्स: 0191-2470067

विज्ञानं ब्रह्म

विश्वविद्यालय का दर्शन (Vision) एवं उद्देश्य (Mission) तथा गुणवत्ता नीति (Quality Policy)

दृष्टि

राष्ट्रीय अखंडता और मानवीय मूल्यों की पवित्रता का संरक्षण करते हुए भारतीय समाज और सम्पूर्ण विश्व की सेवा के लिए प्रतिभाशाली युवाओं के विकास एवं संपोषण हेतु एक उत्कृष्ट वैज्ञानिक और तकनीकी विश्वविद्यालय की स्थापना

उद्देश्य

उत्कृष्टता के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिमानों के साथ समाजोपयोगी शिक्षा, विद्वत्ता एवं अनुसंधान को बढ़ावा देना

गुणवत्ता नीति

पूर्ण सहभागिता एवं पारदर्शी व्यवस्था द्वारा उत्तम शैक्षणिक वातावरण का सदुपयोग कर लोगों में निष्ठा, दक्षता और मानवीय मूल्यों से परिपूर्ण बौद्धिक और वैयक्तिक क्षमता का अनवरत विकास

हिन्दी प्रकोष्ठ
श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय
कटड़ा,जम्मू एवं कश्मीर,भारत-182320

----हिन्दी प्रकोष्ठ----

श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय में हिन्दी प्रकोष्ठ की स्थापना का निर्णय यूजीसी के निर्देशों के अनुपालन में विश्वविद्यालय कार्यकारी परिषद् द्वारा इसकी 24वीं बैठक में 23.11.2015 को लिया गया। इसके क्रियान्वयन की अधिसूचना 15.02.2016 को निर्गत की गयी। इसके क्रियान्वयन के लिए समन्वयक/नोडल अधिकारी को नियुक्त किया गया साथ ही छात्र सचिव के पद का भी सृजन किया गया। हिन्दी प्रकोष्ठ के निम्नलिखित उद्देश्य और दायित्व निर्धारित किए गए:

1. कार्यालय और विद्यार्थियों से संबन्धित सूचनाओं को हिन्दी माध्यम से करने को बढ़ावा देना,
2. विद्यार्थियों को हिंदी में सीखने और बातचीत करने के लिए तथा राष्ट्रीय स्तर की वाद-विवाद/भाषण, निबंध लेखन आदि प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना,
3. पुस्तकालय में सामान्य अभिरुचि पठन अनुभाग के लिए महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध हिंदी पुस्तकें/साहित्य और हिंदी पत्र-पत्रिकाओं को खरीदना और सदस्यता लेना,
4. समाचार पत्र, छात्र पत्रिका आदि जैसे संस्थागत प्रकाशनों में हिंदी लेखों का प्रकाशन,
5. हिन्दी में संगोष्ठी/वाद-विवाद/लोकप्रिय व्याख्यान आदि आयोजित करना,
6. हिंदी में अनुवाद, ऑनलाइन सामग्री का निर्माण आदि को प्रोत्साहित करें, नाटक, नुक्कड़ नाटक, एकांकी आदि जैसे थिएटर कार्यक्रमों का आयोजन करना,
7. चर्चा करें और गतिविधियों का एक कैलेंडर तैयार करें और पुरस्कारों का प्रस्ताव भी देना,
8. हिंदी के प्रचार के लिए किसी अन्य स्वीकृत गतिविधि का क्रियान्वयन करना।

अपनी रचनाएं भेजें: hindi.cell@smvdu.ac.in

www.hindicell.smvdu.ac.in